दिसम्बर 2013

दादावाणी

मूल्य : ₹ १०

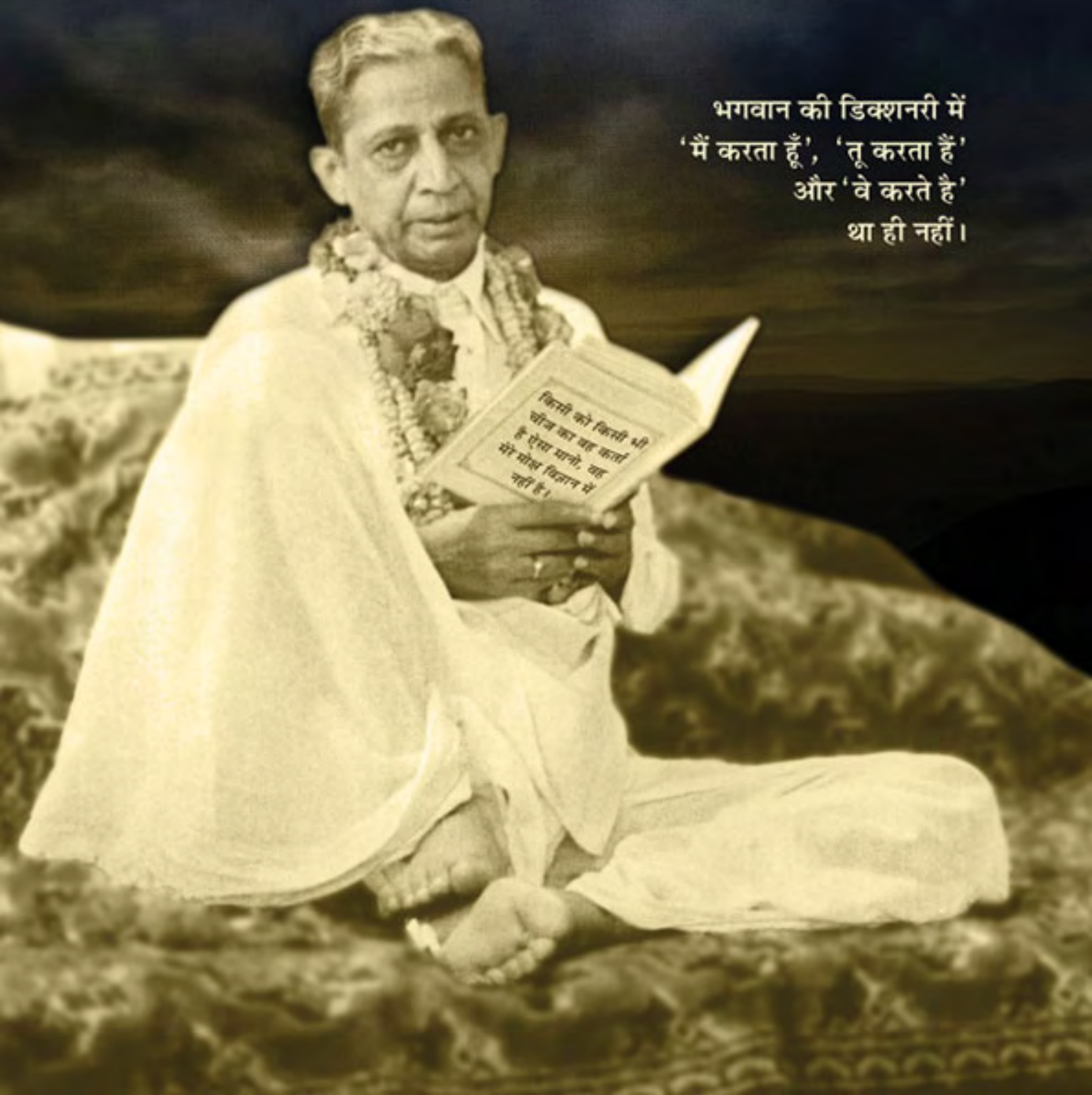

भगवान की डिक्शनरी में
'मैं करता हूँ', 'तू करता हैं'
और 'वे करते है'
था ही नहीं।

संपादक : डिम्पल महेता
वर्ष : ९, अंक : २
अखंड क्रमांक : ९८
दिसम्बर २०१३

संपर्क सूत्र :
त्रिमंदिर, सीमंधर सिटी,
अहमदावाद-कलोल हाइ-वे,
पो.ओ.: **अडालज**,
जि.: गांधीनगर-382421.
फोन : (079) 39830100
e-mail :
dadavani@dadabhagwan.org
www.dadabhagwan.org

Printed & Published by
Dimple Mehta on behalf of
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj -
382421. Dist-Gandhinagar.

Owned by
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj -
382421. Dist-Gandhinagar.

Printed at
Amba Offset
Basement, Parshvanath
Chambers, Nr.RBI,
Usmanpura, Ahmedabad-14.

Published at
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj -
382421. Dist-Gandhinagar.

Total 32 pages including cover

सबस्क्रिप्शन (सदस्यता शुल्क)
१५ साल
भारत : ७५० रुपये
यु.एस.ए. : १५० डॉलर
यु.के. : १०० पाउन्ड
वार्षिक
भारत : १०० रुपये
यु.एस.ए. : १५ डॉलर
यु.के. : १० पाउन्ड
भारत में D.D. / M.O.
'महाविदेह फाउन्डेशन' के नाम
से संपर्कसूत्र के पते पर भेजें।

दादावाणी

टालो भ्रांति, 'मैं, तू और वे करते हैं' की

संपादकीय

परम पूज्य दादा भगवान (दादाश्री) कहते हैं कि हमें भी मोक्ष मिल रहा था लेकिन हमने रोक दिया था, इस 'व्यवस्थित' की खोज के लिए। अनंत जन्मों से यही ढूँढ रहा था कि 'मैं कौन हूँ' और यह जगत् किस आधार पर चलता है?' यह अक्रम विज्ञान कर्म का आधार ही खींच लेता है कि 'मैं शुद्धात्मा हूँ' और 'मैं कर्ता नहीं हूँ, व्यवस्थित कर्ता है।' इसलिए फिर खुद का कर्ता-भोक्तापन नहीं रहता।

व्यवस्थित कर्ता है, इसे अनुभव के स्तर पर समझने के लिए यदि हम रोज़मर्रा के जीवन में फाइल नं-१ को देखें तो समझ में आएगा कि हमें अभी भी व्यवस्थित को समझना बाकी है। जैसे कि पूरे दिन ऐसा कुछ न कुछ बोलते ही रहते हैं कि 'मैंने ऐसा कर दिया। अच्छा हो गया, वे लोग मेरी हेल्प नहीं करते, उसने कुछ किया ही नहीं, उसे अपनी मनमानी ही करनी है, मैं कितना करूँ, मुझसे नहीं हो पाएगा, मुझे आता नहीं है।' पूरे दिन किसने क्या किया यही दिखता रहता है। बुद्धि से और वाणी से पूरे दिन कर्ता भाव निकलता ही रहता है। यह चीज़ सूक्ष्म रूप से आवरण लानेवाली है। ऐसी वाणी पर हमें जागृति रखनी है।

'मैं कर्ता नहीं हूँ,' जितना यह ध्यान में रहता, उतना ही महत्वपूर्ण इसे भी ध्यान में रखना है कि 'सामनेवाला भी कर्ता नहीं है, व्यवस्थित कर्ता है।' सामनेवाले को कर्ता माना तो वहाँ पर भी तुरंत ही राग-द्वेष हुए बिना नहीं रहते। जो अंत में परिणामित होते हैं कर्ताभाव और कर्मबंधन में! सामनेवाला गालियाँ दे और अंदर ऐसा हो कि 'यह ऐसा क्यों बोल रहा है?' तो हो चुका! सामनेवाले को कर्ता देख लिया, अज्ञान ने घेर लिया वहाँ पर। तब यदि ज्ञान हाज़िर हो जाए कि सामनेवाला तो रियल में शुद्धात्मा है, और यह जो बोल रहा है वह तो टेप रिकॉर्डर बोल रहा है, जो हुआ वह व्यवस्थित है, तो वहाँ पर संपूर्ण अकर्ताभाव रहेगा, राग-द्वेष नहीं होंगे और कर्मबंधन नहीं होगा।

मूल बिलीफ दादा ने तौड़ दी है लेकिन अभी तक अभिप्राय नहीं टूटे हैं। अब कर्तापन के अभिप्राय के सामने जागृति रखनी है कि 'वह निर्दोष है, अकर्ता है,' ऐसी जागृति दिन में पाँच-पच्चीस बार आनी ही चाहिए। तब जाकर कर्तापन की गाँठ छूटेगी।

यह तीसरी आज्ञा हमें सिद्ध करनी ही है। जो हुआ वह व्यवस्थित के आधीन है, उसमें कौन से एविडेन्स को गुनहगार कहेंगे? और मूल गुनहगार खुद ही है। जितना व्यवस्थित शक्ति समझ में आएगी कि 'मैं कर्ता नहीं हूँ, सामनेवाला कर्ता नहीं है, सभी संजोगों के एविडेन्स हैं, व्यवस्थित कर्ता है' ऐसा अनुभव में आता जाएगा और वह स्थूल, सूक्ष्म, सूक्ष्मतर, सूक्ष्मतम स्वरूप से समझ में आएगा, अनुभव में आएगा वैसे-वैसे वह ठेठ केवलज्ञान तक पहुँचाएगी। दादा कहते हैं कि 'मैं करता हूँ, तू करता है, वे कर करते हैं,' जब तक कर्तापद की यह भ्रांति रहेगी, तब तक मोक्ष मार्ग में एन्ट्री ही नहीं है। प्रगति भी नहीं है।

यू आर वन ऑफ द एविडेन्स, नोट होल एन्ड सोल डुअर (आप संजोगों में एक निमित्त हो, संपूर्ण कर्ता नहीं हो)। पूर्वकर्म में जो कर्ता हुआ था, आज वह डिस्चार्ज में भोक्ता है। वह आज वाणी का, वर्तन का या कार्यों का, किसी भी प्रकार से कर्ता है ही नहीं। जैसे-जैसे ऐसी जागृति रहेगी, वैसे-वैसे सामनेवाला सहज रूप से निर्दोष दिखाई देगा और रियल में शुद्धात्मा दिखेगा। अंदर आसानी से समाधि दशा रहेगी। सामनेवाला शुद्धात्मा है, अकर्ता है, निर्दोष है और 'व्यवस्थित' कर्ता है। जैसे-जैसे यह चीज़ हृदय में अंकित होती जाएगी, वैसे-वैसे शुद्ध उपयोग रहेगा और आत्मा के स्पष्ट वेदन अनुभव तक पहुँचा जा सकेगा।

जय सच्चिदानंद

पाठकों से...

'दादावाणी' सामायिक में मुद्रित पाठ्य सामग्री मूलत: गुजराती 'दादावाणी' का हिन्दी रूपांतर है। कोष्ठक में दिए गए शब्द या तो अंग्रेज़ी शब्द का अर्थ हैं अथवा शब्द का तात्पर्य स्पष्ट करने हेतु वृद्धित किए गए वाक्यांश है। यहाँ पर 'आत्मा' शब्द को गुजराती और संस्कृत की तरह पुल्लिंग में प्रयोग किया गया है। जहाँ पर भी चंदूभाई नाम का प्रयोग हुआ है, वहाँ पर पाठक खुद को समझें। 'दादावाणी' के इस अंक में अगर आप कोई बात न समझ पाएँ तो प्रत्यक्ष सत्संग में पधारकर समाधान प्राप्त करें। अनुवाद में कोई कमी नज़र आए तो हमें सूचित करने की कृपा करें। ताकि भविष्य में सुधार किया जा सकें ऐसी क्षतियों के लिए हम आपके क्षमाप्रार्थी है।

टालो भ्रांति, 'मैं, तू और वे करते हैं' की

द वर्ल्ड इज़ द पज़ल इटसेल्फ

यह जगत् तो पूरी तरह से उलझन भरा है। द वर्ल्ड इज़ द पज़ल इटलेल्फ। इटसेल्फ पज़ल हुआ है। गॉड हेज़ नॉट पज़ल्ड दिस वर्ल्ड एट ऑल! और पज़ल में से पज़ल ही खड़ी होती रहेंगी! कोई कहे कि इन चंदूभाई ने मेरा बिगाड़ दिया, तब आपको पज़ल खड़ी हो जाती है कि 'मैंने कहाँ बिगाड़ा है? यह बिना बात के मुझे ऐसा कह रहा है?' ऐसे पज़ल खड़ी होती रहती हैं, क्योंकि यह जगत् खुद ही पज़ल है। किसी ने की नहीं है। इसके लिए कौन ज़िम्मेदार है? ढूँढे तो कोई मिल नहीं पाएगा, जगत् ऐसा सुंदर है! हम खुद देखकर कह रहे हैं यह और वैज्ञानिक तरीके से बना है। इटसेल्फ अर्थात् यों साइन्टिफिक सरकमस्टेन्शियल एविडेन्स (वैज्ञानिक संयोगी पुरावा) इकट्ठे होते हैं न तो पज़ल खड़ी हो जाती है।

उनमें से छोटी सी पज़ल आपको दिखाता हूँ। यदि अभी छ: बजे हम देखें तो सूर्यनारायण दिखाई देते हैं। लेकिन थोड़ी देर बाद बादल आकर खड़ा हो गया। और बादल एकदम काला है, इसलिए सूर्यनारायण दिखना बंद हो गए और काले बादल में से थोड़े बादल हट जाएँ तो फिर सुंदर वर्तुल बन जाता है। वह किसने बनाया? इतने बादल रहेंगे तभी वैसा दिखाई देगा वर्ना यदि कम होंगे तो वैसा नहीं दिखाई देगा। ज़्यादा घने बादल होंगे तो भी वैसा नहीं दिखाई देगा। इसलिए 'साइन्टिफिक सरकमस्टेन्शियल एविडेन्स' है। इसमें किसी को कुछ करना नहीं पड़ता।

अनेक संयोगी पुरावा (एविडेन्सेस) से होता है कार्य

प्रश्नकर्ता : हम इस जगत् को, साइन्टिफिक समकमस्टेन्शियल एविडेन्स कहते हैं, तो उसमें 'साइन्टिफिक' अर्थात् उसमें कॉज़ एन्ड इफेक्ट आते हैं। लेकिन 'सरकमस्टेन्शियल एविडेन्स' अभी तक पूरी तरह से समझ में नहीं आता।

दादाश्री : जैसे कि वकील क्या कहते हैं कि आँखों से देखा हुआ एविडेन्स। आँखों से दिखे ऐसे एविडेन्स हैं, कहते हैं। नहीं कहते? 'आई विटनेस' कहते हैं न? वे किस चीज़ का पुरावा निकालते हैं?

प्रश्नकर्ता : जो देखा हो, उसी का।

दादाश्री : जो भी देखा, उसका यह सभी पुरावा निकालते हैं। जो कुछ देखा उस पर से, क्या-क्या देखा था, किस तरह देखा था, आँखों से दिखनेवाले ऐसे पुरावे। और ये वे हैं जो आँखों से नहीं दिखें ऐसे पुरावे, अर्थात् साइन्टिफिक, वैज्ञानिक। उसमें पूर्वभव में जो भाव किया था वह संयोग, दूसरों के साथ के कितने ही संयोग मिल जाते हैं, टाइम-स्पेस सभी, अभी जो बैठे हो न, वह स्पेस भी तय है, तभी यह बातचीत हो पाती है वर्ना नहीं हो पाएगी। कोई कहेगा कि 'मैं इस टाइम पर ऐसा करूँगा,' वह कहीं चलता नहीं। इसलिए टाइम, स्पेस,

पूर्वजन्म के भाव, मेरे संयोग, अन्य कितने ही संयोग इकट्ठे हुए, तब जाकर यह कार्य हो पाया!

अर्थात् यह जगत् वैज्ञानिक संयोगों से ही चलता रहता है। जैसे कि आँखों देखा एविडेन्स कहते हैं, वैसे ही यह वैज्ञानिक, गुह्य संयोंगो जब खुलते हैं तब, हमें बुद्धि से पता नहीं चल पाता, कि कौन-कौन से संयोग मिल रहे हैं। सिर्फ संयोगी पुरावा एक नहीं, अनेक संयोग मिलने से यह कार्य होता है।

कर्ता कौन? व्यवस्थित शक्ति

अभी घर में क्या आपकी परछाई दिखती है? नहीं। और बाहर रास्ते पर निकलोगे तो परछाई पड़ेगी। उसके बाद फिर आप अगर ऐसे घूमोगे तो भी परछाई पड़ेगी और आप वैसे घूमोगे तो भी परछाई पड़ेगी। उस परछाई को बनाने में कितना समय लगता है? अर्थात् 'ऑन्ली साइन्टिफिक सरकमस्टेन्शियल एविडन्स' है यह जगत्। कुछ भी नहीं हुआ है, कुछ भी बना नहीं है। जगत् तो 'साइन्टिफिक सरकमस्टेन्शियल एविडन्स' ही है।

जब सुबह उठते हो, तो कौन उठाता है? कोई दूसरी शक्ति उठाती है ऐसा लगता है या आपकी शक्ति से उठते हो?

प्रश्नकर्ता : नहीं, हमारी शक्ति से नहीं उठ पाते।

दादाश्री : हाँ, तो दूसरी शक्ति है न! फिर उठने के बाद हमें जल्दी से संडास जाना हो, लेकिन नहीं जाने देता, तो कौन नहीं जाने देता? वही शक्ति, 'व्यवस्थित शक्ति'।

अनुभव के तारण से प्रकट हुआ 'व्यवस्थित'

प्रश्नकर्ता : आपमें 'व्यवस्थित' शब्द किस तरह स्फुरित हुआ?

दादाश्री : वह तो कितने ही जन्मों से ऐसा खोज रहा था कि ऐसे साधु बनकर हमें अकेले को मोक्ष में नहीं जाना है। घर के लोगों को, सभी को छोड़कर हमें मोक्ष में नहीं जाना है। क्या संसार बाधक है? संसार का क्या दोष है, बेचारे का?

व्यवस्थित को ढूँढने के लिए बहुत समय तक घूमा हूँ मैं। क्योंकि वह है तभी उतनी शांति रहती है हमें। अभी आप यहाँ बैठे हो, तब तक मन में ऐसा लगता है न, कुछ विचार आते हैं, तब कहते हो, 'व्यवस्थित' है। शांति रहती है या नहीं रहती? और वैसा ही है, वह ढूँढ निकाला, मैंने। एक्ज़ेक्ट खोज लाया हूँ।

हिसाब हमने ढूँढ निकाला और व्यवस्थित की खोज हम लेकर आए। अक्रम विज्ञानी का पद, यह तो हम निमित्त बन गए। ऐसा तो किसी के हिस्से में आए ही नहीं। यह तो हमारे हिस्से में आ गया, वही आश्चर्य है!

'व्यवस्थित' की खोज, ज्ञानी का *नियाणा*

हमारी यह व्यवस्थित की खोज बहुत लंबे समय से हैं। यही खोज रहा था कि यह जगत् किस आधार पर चल रहा है और कितना भाग चल रहा है और कितना भाग नहीं चल रहा? उसकी खोज करने के बाद यह व्यवस्थित रखा है। उसके बाद तो व्यवस्थित को जान लिया इसलिए फिर हो गया, खत्म हो गया फिर, रहा क्या? पूरा ज्ञान प्राप्त हो ही जाता है।

हमने जो यह व्यवस्थित दिया है न, वह एक्ज़ेक्ट व्यवस्थित है। 'हमारी यह खोज पूरी हो जाएगी तभी हमें मोक्ष जाना है,' ऐसा निश्चित किया था, हमारा *नियाणा* (अपना सारा पुण्य लगाकर किसी एक चीज़ की कामना करना)था। तो हमें यह मिल गया और इन सभी को दिया। एक्ज़ेक्ट 'व्यवस्थित'।

इस जन्म में बाधक कौन है? कर कौन रहा है? इसी खोज में लगा हुआ था, कितने ही जन्मों से। मैं जो लाया हूँ न, वह कई सारे जन्मों का सार लाया हूँ। सार निकालते-निकालते लाया हूँ। कर्ता कौन? यह 'व्यवस्थित कर्ता' मैंने दिया। फिर यह 'साइन्टिफिक सरकमस्टेन्शियल एविडेन्स', वह मेरा अनुभवपूर्वक देखा हुआ है।

निर्‌अहंकारी है, तो कर्ता व्यवस्थित

व्यवस्थित तो किसके लिए है? कि जिनका अहंकार निर्मूल हो गया हो उनके लिए। जब तक अहंकार रहता है न, तब तक तो दूसरा कुछ कुरेदे बगैर रहेगा नहीं। इसलिए हम तो यह अहंकार को निर्मूल करने के बाद में यह 'व्यवस्थित' देते हैं!

अहंकारी और व्यवस्थित में बैर है। वे दोनों साथ में नहीं रह सकते। व्यवस्थित निर्‌अहंकारी के लिए है। अहंकार तो व्यवस्थित के बाप को भी तोड़ डाले! अत: जब तक अहंकार है, तब तक वह व्यवस्थित नहीं कह सकता। व्यवस्थित, सिर्फ डिस्चार्ज कर्म के लिए ही व्यवस्थित है, चार्ज कर्म में व्यवस्थित नहीं है।

यह व्यवस्थित शक्ति तो सभी काम करती है। वह अहंकार को, खुद को भी समझ में आता है कि 'यह मैं नहीं कर रहा था' और मैं बेकार ही भ्रांति से बोल रहा था, 'मैं करता हूँ' ऐसा। जबकि करती है व्यवस्थित शक्ति। नहीं तो संडास करने गए हुए (लोगों को) वापस लौटते हुए मैंने देखा है। मैंने कहा, 'क्यों वापस आ गए?' तब कहते हैं, 'उ..उ.. उ..' मैंने कहा, 'बूढ़े हो गए फिर भी नहीं हो पाता? क्या ऐसा जवान और छोटे बच्चों को नहीं होता?' तब कहते हैं, 'नहीं, मुझे भी नहीं हो रहा।' तो भाई तू जीवित है या मरा हुआ? अरे, संडास तक नहीं कर सकता। तब फिर क्यों बेकार में उछल-कूद करता है? यह प्रयत्न भी सफल नहीं हुआ, भला!

सभी जन्मों में भटक-भटककर आया है। कहीं भी सच्चा सुख नहीं मिला। वहाँ अहंकार की गर्जनाएँ और विलाप ही किए हैं। अहंकार से डखा (हस्तक्षेप) नहीं करे तो इसे जैसा है वैसा जान पाए। अब अहंकार क्यों करता है, कि खुद करता नहीं है और क्या कहता है, 'मैंने ऐसा किया और वैसा किया।' लेकिन ऐसा नाटकीय रूप से बोलना। भगवान कर्ता नहीं हैं और आप भी कर्ता नहीं हो, जो करेगा उसे बंधन होगा। इसलिए करती है एक अन्य शक्ति, वह है 'व्यवस्थित शक्ति'। मूलत: उसकी साइन्टिफिक सरकमस्टेन्शियल एविडेन्स हैं। इस तरह यह सब विज्ञान से उत्पन्न हुआ है। करता है कोई और लेकिन आप मानते हो कि 'मैं कर रहा हूँ यह' इतना ही। उसी को अहंकार कहते हैं। यह अहंकार निकल जाए तो यह सब व्यवस्थित है और जब तक अहंकार हो तब तक दखल किए बिना रहता नहीं। दखल यानी ऐसा करूँ और वैसा करूँ, इस तरह दखल कर देता है वह, इससे कुछ होगा नहीं।

कुछ भान ही नहीं है, भान क्यों नहीं है? तब कहते हैं कि हकीकत क्या है वह समझ नहीं पाता और बेहद अहंकार है।

अहंकारी व्यक्ति के लिए भी जगत् है तो व्यवस्थित, लेकिन अहंकारी व्यक्ति व्यवस्थित को व्यवस्थित नहीं रखता, उल्टा कर आता है। इसलिए हमने इन सभी को (महात्माओं को) अहंकार ले लेने के बाद में फिर व्यवस्थित कहा।

व्यवस्थित की वास्तविकता का वर्णन करें ज्ञानी

जगत् तो चलता ही रहता है, और उसी को लोग चलाते हैं। जो चलाता रहता है उसे क्या चलाना? और वह उठे या न उठे, लेकिन सूर्यनारायण, वगैरह उठकर तैयार। जगत् निरंतर चलता ही रहता है!

यदि इस पेट्रोल पर अंगारा गिरे, तो फिर हमें

उसे जलाने की ज़रूरत रहती है या अपने आप ही जल उठता है? ऐसा ही है यह सब। किसी कर्ता की ज़रूरत नहीं है।

सोडियम धातु को पानी में डाला जाए तो धड़का हो जाएगा, उसे साइन्स से समझा जा सकता है। उसी तरह यह जगत् भी साइन्स से खड़ा हो गया है। उसी तरह ये संबंध भी साइन्स से खड़े हो गए है, लेकिन इसे ज्ञान से समझा जा सकता है।

बिजली क्यों चमकती है? किसने कड़कड़ाहट करवाई? बिजली चमकती है, और कड़कड़ाहट होती है, वह क्या है? वहाँ क्या कोई पत्थर है? नहीं, बाष्प, और बादल। देखो तो सही, चमत्कार तो देखो! कुदरत बहुत ज़बरदस्त है! वह तो अगर आप कभी आओ तो समझा दूँ।

विज्ञान समझने से हो समाधान

अभी चाय-पानी, वगैरह जो कुछ भी आप खाते-पीते हो न, वह सब व्यवस्थित के ताबे में हैं। आप कुछ भी देखने या ढूँढने नहीं जाओ, फिर भी आ मिलेगा। शक्कर कहाँ से आई? हमें कोई जाँच नहीं करनी पड़ती। गन्ना किसने उगाया? इसकी सब जाँच करनी पड़ती है? वह सब आ जाता है न? कैसे आ मिलता है? वह सेट किया हुआ क्रम है। अभी तक तो 'मैं ही कर्ता हूँ,' मानते थे।

यह भोजन किस आधार पर मिलता है, वह कोई जानता होगा? यह साधु-साध्वी कुछ नहीं जानते। वे तो ऐसा ही समझते हैं कि 'मैं खाता हूँ।' वहाँ पर गया और फिर ले आया और इस तरह खाया। अरे, लेकिन तुझे यह किस आधार पर मिला? आज करेले क्यों मिले? आज बैंगन क्यों मिले? ज़मींकंद क्यों मिला, आज?

अंदर जो परमाणु हैं, उसके आधार पर स्त्री को प्रेरणा होती है और उस अनुसार सबकुछ बनकर थाली में आता है। जितना अंदर होगा उतना ही बाहर से मिलेगा, वर्ना हो पाए ऐसा नहीं है। यह तो बहुत गहरा विज्ञान है! ये तो सूक्ष्म बातें हैं। कोई क्या ऐसा सोचता होगा कि मेरी थाली में यह किस आधार पर आया? इसका आधार क्या है? और कुदरत के वहाँ तो एक परमाणु भी, यह एक राई का भी आपको मिलना, एक दाना भी मिलना, वह आपको साइन्स के विरुद्ध मिल ही नहीं सकता!

अहंकार से मुक्त होने पर समझ में आए, 'नहीं मैं कर्ता'

अगर एक दिन के लिए आप कर्तापद छोड़ दो तो सबकुछ मिलेगा या नहीं मिलेगा, चाय-पानी वगैरह? व्यवस्थित शक्ति निरंतर व्यवस्थित रखती है।

प्रश्नकर्ता : व्यवस्थित शक्ति यदि हरएक से काम करवाती हो, तो फिर मनुष्य को कुछ करने को रहता ही नहीं है न! प्रोग्रेस होगी ही नहीं फिर तो।

दादाश्री : करता ही है न, 'मैंने यह किया' कहता ही है न! और इसीलिए संसार में भटकता है। वह यदि व्यवस्थित को समझ जाए कि 'यह करनेवाला दूसरा कोई है और मैं नहीं करता हूँ। यह तो मुझे ऐसा गलत भासित हो रहा है।' तो वह मुक्त हो जाएगा। लेकिन ऐसा नहीं है, वह तो अहंकार करता है कि 'नहीं, मैं ही कर रहा हूँ।' बाकी उसे भासित होता है कि 'मैं कर रहा हूँ। यह दूसरा कोई तो है ही नहीं, मैं ही हूँ!'

प्रश्नकर्ता : इन सब फाइलों का हम सर्जन करते हैं, तो जब इन फाइलों का सर्जन हो जाता है, तब अहंकार को पोषण मिलता है। ठीक है?

दादाश्री : वह मानता है कि, 'यह मैंने किया,' इसलिए पोषण मिलता है।

प्रश्नकर्ता : और जब फाइलों का विसर्जन

होता है, तब अहंकार का नाश होता है या दिशा बदलता है?

दादाश्री : नहीं, वह डिस्चार्ज हो जाता है। उस अहंकार का नाश हो जाता है, लेकिन दूसरावाला खड़ा हो जाता है न एक तरफ। एक तरफ चार्ज अहंकार है न! वह चार्ज अहंकार बंद हो जाए, तो फिर विसर्जन अहंकार में हर्ज नहीं है। यानी डिस्चार्ज अहंकार तो इन सब में है ही। अहंकार के बिना पानी भी नहीं पीया जा सकता। लेकिन इस 'ज्ञान' के बाद कर्तापद का अहंकार चला गया कि, 'मैं करता हूँ'। वह भान गया और 'कौन करता है?' वह व्यवस्थित, समझ में आ गया न?

अपना व्यवस्थित ही ऐसा, उसमें भूल किसकी?

प्रश्नकर्ता : कईबार ऐसा होता है न कि प्रमोशन मिला, प्रगती हुई हो नौकरी में, कागज़-वागज़ सब हस्ताक्षर-मोहर के साथ आ जाता है, और फिर हफ्तेभर बाद वापस दूसरा पत्र आए कि 'भाई, आपका प्रमोशन केन्सल हो गया है,' तो यह कैसा व्यवस्थित? हस्ताक्षर-मोहर लग गए यानी व्यवस्थित में तो आ ही गया, फिर भी वापस केन्सल हुआ तो यह कैसा व्यवस्थित? वह ज़रा समझना है।

दादाश्री : वह व्यवस्थित नहीं था, इसीलिए तो फिर से दूसरा पत्र आया। पूरे संजोग इकट्ठे नहीं हुए थे। दूसरा कोई संजोग कच्चा था, इसलिए फिर से पत्र आ गया। फाइनल करवाए वह व्यवस्थित, फाइनल नहीं करवाता है वह व्यवस्थित में नहीं था।

सेठ इनाम दे रहे हों तो वह अपना व्यवस्थित और जब अपना 'व्यवस्थित' उल्टा आता है, तब सेठ के मन में ऐसा होता है कि 'इस बार इसका वेतन काट लेना चाहिए।' तब सेठ वेतन काट लेता है, तब मन में ऐसा होता है कि 'यह सेठ नालायक है। मुझे ऐसा नालायक मिला।' लेकिन किसी को ऐसे गुणन करना आता नहीं है कि 'अगर वह नालायक होता तो इनाम किसलिए दे रहे थे!' इसलिए कुछ भूल है, हिसाब निकालने में अन्य कुछ भूल है। सेठ टेढ़ा नहीं है, यह तो अपना 'व्यवस्थित' पलट रहा है! ये गेहूँ संग्रह करनेवाले, वे टेढ़े नहीं है। अगर हमें गेहूँ नहीं मिल रहे हैं तो इसका मतलब अपना 'व्यवस्थित' टेढ़ा है। इसलिए हम क्या कहते हैं कि 'भुगते उसी की भूल।' गेहूँ का संग्रह करनेवाले वे लोग तो जब पकड़े जाएँगे तब उनकी भूल, तब वे गुनहगार कहलाएँगे। अभी नहीं पकड़े गए हैं। अभी तो मोटरों में घूम रहे हैं, इसलिए 'भुगते उसी की भूल!'

लोग यह तो कहते हैं न, कि आपने कितना सुंदर व्यवस्थित दिया हुआ है! सिर्फ व्यवस्थित के ज्ञान में रहें तो मोक्ष में चले जाएँ! सिर्फ व्यवस्थित को समझकर, उसके पीछे पड़ जाए कि ''यह भी व्यवस्थित और वह भी व्यवस्थित। मुझे गाली दी, धौल मारी वह भी व्यवस्थित, मुझे 'आइए, पधारिए' कहा वह भी व्यवस्थित।''

जगत् के व्यवहार को 'व्यवस्थित' कहोगे तो फिर फिर आशा, तृष्णा वगैरह सब खत्म हो जाएँगे।

आपके हाथ में सत्ता कितनी?

प्रश्नकर्ता : व्यवहार में यदि कोई झूठ बोले तब, ऐसा सुना ही दिया जाता है कि 'आप क्यों झूठ बोल रहे हो।'

दादाश्री : शब्द का उपयोग कितना आपके हाथ में है? आपके हाथ में सत्ता कितनी है? यदि आपके हाथ में सत्ता होती तो आप ऐसा कहते ही नहीं। आपके हाथ में सत्ता नहीं है और आप 'कम उपयोग करना और ज़्यादा उपयोग करना' कह रहे हो, वह विकल्प हैं। सिर्फ ज्ञान के हिसाब से ही बात सही है कि कम बोलना चाहिए लेकिन ऐसा हो नहीं पाता न!

यदि मैं कहूँ कि 'अरे, कुछ मत बोलना, गुस्सा मत करना' तभी वह कहेगा कि 'अरे साहब, आप बात कर रहे हैं, लेकिन ऐसा एकज़ेक्टनेस (यथार्थता) में होना चाहिए न?' जहाँ खुद से हो ही नहीं सकता, उसे करना कैसे संभव हो पाएगा?

वापस आ जाओ प्रतिक्रमण से

प्रश्नकर्ता : 'आप झूठे हो' ऐसा बोलते हैं और फिर उससे खुद को ही दु:ख होता है। 'जगत् अकर्ता है' वह विज्ञान समझ में नहीं आता, अब कुछ समझ में फिट करवा दीजिए, दादा।

दादाश्री : किसी को आप कहो कि 'आप झूठे हो।' तो अब, झूठा कहते ही इतना सारा साइन्स काम कर जाता है अंदर, उसके इतने सारे पर्याय उत्पन्न हो जाते हैं कि आपको दो घंटों तक तो उसके प्रति प्रेम ही उत्पन्न नहीं होता। इसीलिए शब्द बोला ही नहीं जाए तो उत्तम है और यदि बोला जाए तो प्रतिक्रमण करो। 'आपको बोलना ही नहीं है।' ऐसा तो कह ही नहीं सकते क्योंकि व्यवस्थित है न! लेकिन यदि बोल दो तो प्रतिक्रमण करो, अपने पास वह साधन है।

बिगड़ते हैं परिणाम, अपने अभिप्राय से

जब 'नगीनभाई' यहाँ रूम में प्रवेश करें तो तुरंत ही आपको उसके प्रति अभाव उत्पन्न हो जाता है, किसलिए? क्योंकि ऐसा अभिप्राय बन गया है कि 'नगीनभाई का स्वभाव ही नालायक है,' इसलिए 'नगीनभाई' यदि कुछ अच्छा कहने आएँ, फिर भी खुद उसे टेढ़ा मुँह दिखाता है। ऐसे अभिप्राय बन गए हैं। उन सबको निकालना तो पड़ेगा ही न?

अत: किसी भी प्रकार के अभिप्राय नहीं रखने हैं। जिसके लिए खराब अभिप्राय बन गए हों, वे सब तोड़ देना चाहिए। ये तो सब बेकार के अभिप्राय बन जाते हैं, गलतफहमी से बन जाते हैं।

कोई कहेगा कि अपना 'अभिप्राय खत्म हो जाए तो भी क्या उसकी प्रकृति क्या बदल जानेवाली है?' तब मैं क्या कहता हूँ कि 'प्रकृति भले न बदले, उससे हमें क्या मतलब?' तो कहेगा कि 'फिर हमारे बीच टकराव तो रहेगा ही न?' तो मैं क्या कहता हूँ कि 'नहीं। जैसे परिणाम (अभिप्राय) सामनेवाले के प्रति आपके होंगे, सामनेवाले के परिणाम भी वैसे ही हो जाएँगे।' हाँ, उसके लिए आपका अभिप्राय टूट जाए और आप उसके साथ खुश होकर बात करो तो वह भी आपसे खुश होकर बात करेगा। फिर उस घड़ी आपको उसकी प्रकृति नहीं दिखेगी।

यानी अपने मन की छाया उस पर पड़ती है! 'हमारे' मन की छाया सभी पर किस तरह पड़ती है? अगर घनचक्कर भी सयाना हो जाए! अगर अपने मन में ऐसा हो कि 'नगीनभाई' पसंद नहीं है, तो नगीनभाई के आने से नापसंदगी उत्पन्न होगी और उसका फोटो (स्पंदन) उस पर पड़ेगा! उसके अंदर तुरंत फोटो पड़ता है कि इनके अंदर क्या चल रहा है! अपने भीतर के वे परिणाम सामनेवाले को उलझाते हैं। सामनेवाले को खुद को पता नहीं चलता लेकिन उसे उलझन में डाल देते हैं! इसलिए आपको अभिप्राय तोड़ देने चाहिए! अपने सभी अभिप्राय आपको धो देने चाहिए ताकि आप छूट जाओ। बाकी सभी लोगों के लिए आपको ऐसा कुछ नहीं होता। कोई रोज़ चोरी करता हो तो आपको ऐसा अभिप्राय बनाने की ज़रूरत ही क्या है कि 'वह चोर है,' वह जो चोरी करता है, वह उसके कर्म का उदय है! और जिसका लेना है, वह उसके कर्म का उदय है, उससे हमें क्या लेना-देना? लेकिन यदि उसे हम 'चोर' कहें तो वह अभिप्राय ही है न। और वास्तव में तो वह आत्मा ही है न।

निकालो कर्तापन का लघुतम

ये लोग जो कुछ भी बोलते हैं, क्या उसका

लघुतम निकालते हो आप! ऐसा सब बोलते हैं उसका लघुतम निकालो, वह समझना है और इस जगत् में सब 'व्यवस्थित' है। इसलिए किसी को ऐसा मत कहना कि 'तूने गलत किया।' ऐसा तो कहना ही नहीं चाहिए, ऐसा सोचना भी नहीं चाहिए। कहने की तो बात ही कहाँ गई, बोलने से तो सामनेवाले को बुरा लग जाता है, लेकिन ऐसा सोचना भी नहीं चाहिए। इसलिए हम कहते हैं न, 'व्यवस्थित' है। 'व्यवस्थित' का अर्थ क्या है? कोई दोषित है ही नहीं! यदि आप 'व्यवस्थित' समझ लो तो कोई आपको दोषित दिखेगा ही नहीं।

दिव्य दृष्टि से दिखे निर्दोष

प्रश्नकर्ता : जगत् निर्दोष किस अर्थ में है?

दादाश्री : खुले अर्थ में! इस जगत् के लोग नहीं कहते कि, 'यह हमारा दुश्मन है, मुझे इसके साथ अच्छा नहीं लगता, मेरी सास खराब है।' लेकिन मुझे तो सब निर्दोष ही दिखते हैं।

प्रश्नकर्ता : लेकिन आप तो कहते हैं आपको कोई खराब दिखता ही नहीं है।

दादाश्री : कोई खराब है ही कहाँ? तो फिर खराब क्या देखना? हमें सामनेवाले का सामान देखना है! डिब्बी का क्या करना है! डिब्बी तो पीतल की हो या तांबे की हो या लोहे की भी हो सकती है! दुश्मन दिखे तब दु:ख होता है न, लेकिन दुश्मन ही नहीं देखें न! अभी तो आपकी दृष्टि ऐसी है, चमड़े की आँख है, इसलिए 'यह दुश्मन, यह अच्छा नहीं है और यह अच्छा है,' ऐसा कहते हो। 'यह अच्छा है', लेकिन दो-चार सालों बाद वापस उसी को 'खराब' कहते हो। कहते हैं या नहीं कहते?

प्रश्नकर्ता : ज़रूर कहते हैं।

दादाश्री : और मुझे इस वर्ल्ड में कोई भी दुश्मन नहीं दिखता। मुझे निर्दोष ही दिखते हैं सब, क्योंकि दृष्टि निर्मल हो गई है। इन चमड़े की आँख से नहीं चलेगा, दिव्यचक्षु चाहिए।

निर्दोष दृष्टि से आंतरिक शुद्धिकरण

प्रश्नकर्ता : ऐसी निर्दोषता किस तरह प्राप्त होगी?

दादाश्री : पूरे जगत् को निर्दोष देखोगे तब। मैंने पूरे जगत् को निर्दोष देखा है, तब जाकर मैं निर्दोष हुआ हूँ। हित करनेवाले को और अहित करनेवाले को भी हम निर्दोष देखते हैं।

प्रश्नकर्ता : 'रिलेटिव' तो दिखने में दोषित ही दिखता है न?

दादाश्री : दोषित कब माना जाता है? उसका शुद्धात्मा वैसा कर रहा हो, तब। लेकिन शुद्धात्मा तो अकर्ता है। वह कुछ भी कर सके, ऐसा है नहीं। यह तो डिस्चार्ज हो रहा है, उसमें तू उसे दोषित मानता है। दोष दिखें, तो उनके लिए प्रतिक्रमण करना। जब तक जगत् में कोई भी जीव दोषित दिखता है, तब तक समझना कि अंदर शुद्धिकरण नहीं हुआ है, तब तक इन्द्रियज्ञान है। जो खुद नहीं कर रहा है उसे करने का आरोप करना, वह है अहंकार।

देखकर कर्ता, खुद ज्ञान में कच्चा पड़ा

आपने कुछ कहा, तब उसी को दोष दिखाई दे, तो उससे क्या फायदा होगा?

प्रश्नकर्ता : फायदा कैसा? नुकसान ही होगा न!

दादाश्री : किस ज्ञान के आधार पर वह दोष देख रहा है?

प्रश्नकर्ता : उसमें ज्ञान कहाँ आया? वह तो अज्ञानता के कारण ही दोष देखता है न?

दादाश्री : हाँ, लेकिन उसने ज्ञान लिया हो, फिर भी अगर दोष देखे तो? वह अपने ज्ञान को ही कमज़ोर बना रहा है। खुद कर्ता नहीं और सामनेवाले को कर्ता देखता है, वह खुद ही कर्ता होने के बराबर है। सामनेवाले को कुछ अंश तक कर्ता देखे, तो खुद कच्चा पड़ गया, ऐसा हमारा ज्ञान कहता है। फिर प्रकृति भले ही लड़े-झगड़े लेकिन कर्ता नहीं देखना है। प्रकृति तो झगड़ भी पड़े!

प्रश्नकर्ता : कईबार बेहद झगड़ पड़ती है, वह क्या है?

दादाश्री : बेहद? अरे, वह तो अच्छा है! मारामारी नहीं करता, इतना अच्छा है। नहीं तो उससे आगे जाए, बंदूक लेकर पीछे पड़ जाए, प्रकृति तो!

हाँ, वह सब भी हो सकता है। जैसा माल भरा है वैसा निकलेगा! लेकिन कर्ता देखा तो भी अपना ज्ञान कच्चा पड़ जाता है। क्योंकि यह सब परसत्ता ही करती है। आपमें इस तरह ज्ञान कच्चा पड़ जाता है क्या?

प्रश्नकर्ता : हाँ, कईबार पड़ जाता है।

दादाश्री : प्रकृति झगड़े उसमें हर्ज नहीं, लेकिन 'उसे' कर्ता न देखे। प्रकृति तो, जिस अनुसार खुद ने ड्रॉइंग की हो न, पिछले जन्म में फिल्म उतारी, उस अनुसार लड़ती भी है, मारामारी भी करती है। लेकिन हमें उसे कर्ता नहीं देखना है।

पूरे दिन में किसी का कोई भी गुनाह नहीं होता है। जितने किसी के दोष दिखते हैं, उतनी अभी कमी है! सारा आपका ही हिसाब है।

विज्ञान से पता चलें हकीकतें

दोषित तो कोई दिखना ही नहीं चाहिए। मन में भी नहीं होना चाहिए। बुद्धि में तो होना ही नहीं चाहिए।

प्रश्नकर्ता : बुद्धि में फिर कैसा होता है?

दादाश्री : बुद्धि क्लियर (चोखी) होती है। यदि मुझे कोई बहुत गालियाँ दे गया हो, तो उसे मैं ऐसा कहता हूँ कि 'वह बहुत अच्छा इन्सान है, उसके जैसा इन्सान मिले ही नहीं!'

प्रश्नकर्ता : लेकिन दादा, यदि हम ऐसा कहेंगे कि 'यह बहुत अच्छा इन्सान है' लेकिन साथ ही साथ फिर अंदर से दिखलाता है कि 'क्या अच्छा है? ऐसा तो कर गया, उसे कैसे अच्छा कहें?'

दादाश्री : वह ऐसा कहे फिर भी हम उसे समझाकर हमारी बात एड़जस्ट करवा देते हैं। उसे समझा देते हैं बहुत अच्छी तरह से।

प्रश्नकर्ता : ऐसा क्या समझा देते हैं उसे?

दादाश्री : अंतिम बात यह समझाते हैं कि 'यथार्थतः तो आत्मा से, निश्चय से तो वह शुद्ध हैं और व्यवहार में तो वह बेचारा परवशता से कर रहा है, उसमें उस बेचारे का क्या दोष?' ऐसा सब समझाकर यों समझा देते हैं लेकिन अंत में उससे कबूल करवा लेते हैं। एक ही शब्द से पूरा नहीं हो जाता। कई तरह के शब्दों से समझाना पड़ता है।

प्रश्नकर्ता : आपने एक बार ऐसा कहा था कि 'वह शुद्धात्मा हैं' इतना कहने भर से वह निर्दोष नहीं दिखाई देता। थोड़ी देर बाद आगे जाकर मन चढ़ बैठेगा। इसलिए वे सभी पहलू दिखाते हैं तभी ऐसा एक्सेप्ट करता है कि 'वह निर्दोष है।'

दादाश्री : हाँ, सिर्फ मन तो इसे एक्सेप्ट करेगा ही नहीं न! मन तो ज्ञान की बातें भी एक्सेप्ट नहीं करता। यह ज्ञान की ही बात है कि, 'अरे भाई, वह परवशता से कर रहा है, उसमें उसका क्या दोष है बेचारा का?' ऐसा हम कहें तब वह कहता है 'ऐसा नहीं चलता।'

प्रश्नकर्ता : तो फिर वहाँ उसे और क्या समझाना चाहिए?

दादाश्री : नहीं समझ पाएगा। जब आपकी ये खिड़कियाँ खुलेंगी न, तब आपको खुद को पता चलेंगी, सारी हकीकतें। खुल्ली बात करो न! आपको जो ये सारी बातें कर रहा हूँ, यदि आप उनमें गहरे उतरोगे, तो फिर आपको खुद को समझ में आ जाएगा, सभी रास्ते मिल जाएँगे। इसीलिए ये कॉज़ेज़ दिखा रहा हूँ। उन कॉज़ेज़ में पड़े रहोगे तो, कार्य रूप में परिणमित हो जाएगा।

भागाकार करके बदलो अभिप्राय

भगवान ने सबको निर्दोष देखा था। किसी को उन्होंने दोषित देखा ही नहीं और जब हमारी वैसी शुद्ध दृष्टि हो जाएगी, तब शुद्ध वातावरण हो जाएगा। फिर पूरा जगत् बगीचे जैसा लगेगा। वास्तव में कहीं लोगों में दुर्गंध नहीं है। लोगों के बारे में स्वयं अभिप्राय बाँधता है। हम चाहे किसी की भी बात करें, लेकिन हमें किसी के लिए अभिप्राय नहीं रहता कि, 'वह ऐसा ही है!'

फिर अनुभव भी होता है कि अभिप्राय निकाल दिए इसलिए इस व्यक्ति में यह परिवर्तन हो गया! अभिप्राय बदलने के लिए क्या करना पड़ेगा? कि यदि वह चोर हो तो हमें 'वह साहूकार हैं,' ऐसा कहना चाहिए। 'मैंने इसके लिए ऐसा अभिप्राय बनाया था, वह अभिप्राय गलत है। अब यह अभिप्राय मैं छोड़ देता हूँ,' इस तरह 'गलत है, गलत है' कहना चाहिए। 'मेरा अभिप्राय गलत है' ऐसा कहना, ताकि आपका मन बदले। नहीं तो मन नहीं बदलेगा।

सब से बड़ा अभिप्राय, 'मैं कर्ता हूँ' वह तो जिस दिन ज्ञान देते हैं, उसी दिन 'ज्ञानीपुरुष' तोड़ देते हैं। लेकिन हर किसी की प्रकृति के अनुसार अन्य छोटे-छोटे, अभिप्राय बन जाते हैं। तो कईं लोगों के तो बहुत बड़े अभिप्राय होते हैं, वे *अटकण* (जो बंधनरूप हो जाए) कहलाते हैं। ऐसे तो करना ही पड़ेगा न! वे सारे अभिप्राय अभी तक रहे हुए हैं, वे सभी अभिप्राय निकाल दें न, तो वीतराग मार्ग पूरी तरह खुल जाएगा।

अभिप्राय से रुकी है अनंत समाधि

यह वीतरागों का विज्ञान तो कैसा है? हमने अभिप्राय बाँधा कि 'ये गलत हैं और ये भूलवाले हैं,' तो पकड़ में आ गए! अभिप्राय तो देना ही नहीं है, लेकिन अपनी दृष्टि भी नहीं बिगड़नी चाहिए! मैं 'सुपरफ्लुअस' (नाटकीय) रहता हूँ। यहाँ कितने सारे महात्मा हैं, उन सभी की हकीकत मैं जानता हूँ, लेकिन मैं कहाँ दखल करूँ? दुरुपयोग करने जैसा यह 'ज्ञान' नहीं है।

अभिप्राय के कारण जैसा है वैसा देखा नहीं जा सकता, मुक्त आनंद का अनुभव नहीं हो पाता, क्योंकि अभिप्राय का आवरण है। अभिप्राय ही न रहें, तब निर्दोष हुआ जाता है। स्वरूपज्ञान के बाद अभिप्राय है तब तक आप मुक्त कहलाते हो, लेकिन महामुक्त नहीं कहलाते। अभिप्राय के कारण ही अनंत समाधि रुकी हुई है।

मैं, तू और वे, वास्तव में नहीं है कोई भी कर्ता

प्रश्नकर्ता : व्यवस्थित कर्ता है, ऐसा भान रहता है लेकिन देह धारण किया हो तो तब तक कर्ताभाव तो रहेगा न?

दादाश्री : कर्ताभाव जाए उसी के लिए तो यह ज्ञान है। यदि सामनेवाले को कर्ता मानें, सामनेवाला गाली दे रहा है, इसलिए उसे कर्ता मानें, तो पूरी बात समझे ही नहीं हो।

सिद्धांत ही यह है कि परसत्ता यह काम कर रही है। इसलिए 'मैं कर्ता नहीं हूँ' ऐसा भान हुआ

है। दूसरे भी कर्ता नहीं हैं। परसत्ता कर रही है, अर्थात् व्यवस्थित शक्ति कर रही है यह सब।

सामनेवाले को 'कर्ता है' ऐसा मानना ही नहीं चाहिए अब आपको। जिस प्रकार 'मैं कर्ता नहीं हूँ' उसी प्रकार सामनेवाला भी कर्ता नहीं है। लेकिन अगर उसे कर्ता मानते हो फिर आप भी कर्ता ही बन गए! दूसरे को कर्ता नहीं देखे, खुद अकर्ता और सामनेवाला भी अकर्ता। 'मैं करता हूँ, तू करता है और वे करते हैं,' इन तीनों में ही कर्तापद नहीं होना चाहिए, इन सभी में। भले कोई भी (संजोग) हो, लेकिन वह कर ही नहीं रहा है, ऐसा दिखाई देना चाहिए।

समझो 'व्यवस्थित' शब्द की गूढ़ सूक्ष्मता

आपको समझ में आया कि मैं क्या कहना चाहता हूँ, वह? यह सूक्ष्म बात है, यों ही कोई बाज़ारू बात नहीं है। सभी शास्त्रों का तोल करके उन्हें एक ओर रख दे, ऐसी बात है इसमें। क्योंकि टाइमिंग के बिना कोई मार सके, ऐसा है नहीं। अत: भगवान क्या कहना चाहते हैं कि, आप ये भावबीज मत डलने देना। यदि बीज नहीं डलने दिया तो फिर अगर आप बंद आँखों से चलोगे, फिर भी कोई आपका नाम देनेवाला नहीं है और खुली आँखों से चलोगे और कोई जीव पैर के नीचे आ गया होगा तो मरने के लिए आने पर भी नहीं मरेगा। आपसे कुचला गया होगा, फिर भी मरेगा नहीं जबकि हिंसकभाववाले के हाथों वह मरेगा, इतना सूक्ष्म साइन्स है। टाइमिंग के बिना कुछ भी नहीं हो सकता, ऐसा इस जगत् में है। कभी न कभी तो यह सही बात समझनी ही पड़ेगी न!

व्यवस्थित गप्प नहीं है! गप्प नहीं चलेगी, आज्ञा के रूप में नहीं दिया जा सकता। व्यवहारिक शब्द आज्ञा के रूप में नहीं दिया जा सकता। यह निश्चय व्यवहार का शब्द है।

अकर्तापद से चल रही है फाइल नं १ की लेबोरेट्री

अरे तूने कभी खाने के बाद पता लगाया है कि अंदर आँतो और आमाशय में क्या होता है? सभी अवयव अपने गुणधर्म में ही हैं। कान उनके सुनने के गुणधर्म में नहीं होंगे, तो सुनाई नहीं देगा। नाक उसके गुणधर्म में नहीं होगी, तो सुगंध और दुर्गंध नहीं आएगी। उसी प्रकार मन-बुद्धि-चित्त और अहंकार, सभी अपने गुणधर्म में ठीक से चल रहे हैं या नहीं, उसका ध्यान रखते रहना है। अगर 'खुद' 'शुद्धत्मा' में रहे, तो कोई भी परेशानी आए, ऐसा नहीं है। अंत:करण उसके गुणधर्म में रहे, जैसे कि मन पैम्फलेट दिखाने का काम करे, चित्त फोटो दिखाए, बुद्धि डिसिज़न ले और अहंकार हस्ताक्षर कर दे, तो सब ठीक चलेगा। वे उनके गुणधर्म में रहें और शुद्धात्मा अपने गुणधर्म में रहे, ज्ञाता-दृष्टा पद में रहे, तो कोई परेशानी आए, ऐसा नहीं है। प्रत्येक अपने-अपने गुणधर्म में ही हैं। अंत:करण में कौन-कौन से गुणधर्म बिगड़े हुए हैं, उसकी जाँच करना और बिगड़े हुए हों तो कैसे सुधारना, सिर्फ इतना ही करना है। लेकिन यह तो कहता है कि 'मैंने सोचा, मैं ही बोल रहा हूँ, मैं ही कर रहा हूँ।' ये हाथ-पैर भी अपने धर्म में हैं, लेकिन कहता है कि 'मैं चला'। मात्र अहंकार ही करता है और अहंकार को ही खुद का आत्मा माना है, इसी का ही बवाल है।

संयोग व्यवस्थित के आधीन

वस्तुओं का सम्मेलन जैसा होता है वैसा ही दिखाई देता है, उसमें किसी को कुछ भी करना नहीं पड़ता। यह जो इन्द्रधनुष दिखाई देता है, तो उसमें रंग भरने कौन गया? वे तो सांयोगिक पुरावे (साइन्टिफिक सरकमस्टेन्शियल एविडन्स) आ मिलें, वस्तुओं का सम्मेलन हुआ, तब इन्द्रधनुष

दिखाई दिया। सांयोगिक पुरावे में, सूर्य हो, बादल हों, देखनेवाला हो आदि कितने ही पुरावे इकट्ठे हों, तब जाकर इन्द्रधनुष दिखाई देता है। उसमें यदि सूर्य अहंकार करे कि मैं नहीं होता, तो यह नहीं हो पाता, तो ऐसा अहंकार गलत है। क्योंकि बादल नहीं होते, तब भी नहीं बनता और यदि बादल अहंकार करें कि हम नहीं होते, तो मेघधनुष बनता ही नहीं, तो वह भी गलत है। यह तो जब वस्तुओं का सम्मेलन होता है, तभी रूपक में आता है। सम्मेलन बिखर जाए, तब विसर्जन होता है। संयोगों का वियोग होने के बाद फिर इन्द्रधनुष नहीं दिखता।

संयोग मात्र वियोगी स्वभाव के हैं और फिर 'व्यवस्थित' के हाथ में हैं। संयोग कब, किस भाव से मिलेंगे, वह 'व्यवस्थित' है। इसलिए झंझट छोड़ न? यह दुनिया कैसे पैदा हुई? मात्र साइन्टिफिक सरकमस्टेन्शियल एविडन्स से। बट नैचुरल है। मुख्य वस्तु 'व्यवस्थित' है। संयोग-वियोग के अधीन रहकर 'व्यवस्थित' चलाता है। कितने ही संयोग जमा हों, तब एविडन्स खड़ा होता है। कितने ही संयोग आ मिलें, तब नींद आती है और कितने ही संयोग आ मिलें, तब जागा जाता है। 'व्यवस्थित' इतना अच्छा है कि संयोग मिलवा ही देता है।

जलप्रपात हो, वहाँ बुलबुले दिखाई देते हैं, वे कैसे भाँति-भाँति के होते हैं? कोई आधा गोल, कोई छोटा होता है, बड़ा होता है, उन्हें किस ने बनाया? किस ने रचा? वे तो अपने आप ही बने। हवा, जोरों से गिरता हुआ जल, लहरें आदि अनेक संयोग जमा हों, तब बुलबुले बनते हैं। जिसमें ज़्यादा हवा भर जाए, वह बड़ा बुलबुला और कम हवा भरे, तब छोटा बुलबुला बनता है। वैसे ही ये मनुष्य भी सारे बुलबुले ही हैं न! मात्र संयोगों से ही उत्पन्न होते हैं।

'मैं कर रहा हूँ,' 'यह आपने किया,' उसका भान, वही है भूल

'मैं कर रहा हूँ' अब सिर्फ यही भान नहीं रखना है, यदि ऐसा कहे तब तो फिर वापस ऐसा भान रहेगा कि 'सामनेवाला कर रहा है,' और सामनेवाले को 'तू कर रहा है' ऐसा कहे तो खुद के लिए ऐसा प्रमाणित हो गया कि 'मैं करता हूँ।' इसलिए अक्रम में 'मैं करता हूँ, तू करता है' वह भान नहीं रहता। अब 'वे करते हैं,' वह भान भी नहीं रहना चाहिए। अगर कोई जेब काटता है तो 'वह काटता है' ऐसा अपने मन में नहीं रहे तो उसका नाम अक्रम। 'यह आपने किया या उन्होंने किया,' जब तक ऐसा लक्ष में रहता है, तब तक यह सब भूल कहलाएगी। और 'यह तो डिस्चार्ज है, व्यवस्थित करता ही रहता है अपने आप,' उसे 'देखते' रहो।

जब तक कर्तापद का भान है, तब तक चार्ज होता ही रहता है। अक्रम मार्ग में हम आपका कर्तापद निकाल देते हैं। 'मैं कर रहा हूँ' वह भान चला जाता है और 'कौन कर रहा है' वह समझा देते हैं। इसलिए चार्ज होना बंद हो जाता है। फिर रहा क्या? सिर्फ डिस्चार्ज रूपी।

इसे सिद्धांत कैसे कहेंगे?

खुद जहाँ नहीं करता है, वहाँ पर आरोपण करता है कि 'मैंने किया'। इसे सिद्धांत कैसे कहेंगे? यह तो विरोधाभास है। तो जगाता कौन है आपको? 'व्यवस्थित' नाम की शक्ति आपको जगाती है। ये सूर्य, चंद्र, तारे सभी 'व्यवस्थित' के नियम के आधार पर चलते हैं। ये सारी मिलें धुएँ के बादल छोड़ती ही रहती है और 'व्यवस्थित शक्ति' उन्हें क्लियर करके वापस 'व्यवस्थित' कर देती है। वर्ना अहमदाबाद के लोग कब से ही घुटकर मर चुके होते। यह जो बरसात होती है, तो वहाँ ऊपर पानी बनाने कौन

जाता है? वह तो नैचुरल एडजस्टमेन्ट (कुदरती प्रकिया) से होता है। दो 'H' (हाईड्रोजन) और एक 'O' (ऑक्सीजन) के परमाणु इकट्ठे होते हैं और दूसरे कितने ही संयोग जैसे कि हवा आदि के मेल से पानी बनता है और बरसात के रूप में बरसता है। वैज्ञानिक क्या कहता है? 'देख, मैं पानी का मेकर (बनानेवाला) हूँ।' अरे! मैं तुझे दो 'H' के परमाणु के बजाय एक ही 'H' का परमाणु देता हूँ, अब बना पानी। तब वह कहेगा, 'नहीं, वैसे तो कैसे बन पाएगा?' अरे! तू भी इनमें से एक एविडेन्स है। तू कैसा मेकर? इस संसार में कोई 'मेकर' है ही नहीं, कोई कर्ता है ही नहीं, निमित्त हैं। भगवान भी कर्ता नहीं हैं। कर्ता बने, तो भोक्ता बनना पड़ेगा न! भगवान तो ज्ञाता-दृष्टा और परमानंदी हैं। खुद के अपार सुख में ही मगन रहते हैं।

इस एलेम्बिक (दवाई बनाने) के कारखाने में कितने ही लोग काम करते हैं, तब केमिकल्स तैयार होते हैं और वह भी फिर एक ही कारखाना, जबकि यह देह तो अनेक कारखानों से बनी हुई है। लाखों 'एलेम्बिक' के कारखानों से बनी हुई है, वह अपने आप चलते हैं। अरे! रात को खाना खाकर सो गया, फिर अंदर कितना पाचकरस पड़ा, कितना पित्त पड़ा, कितना बॉइल पड़ा, उसका पता लगाने जाता है तू? वहाँ तू कितना अलर्ट (जागृत) है? वहाँ तो अपने आप अलग होकर सभी क्रियाएँ होकर सुबह पानी, पानी की जगह और संडास, संडास की जगह बाहर निकल जाते हैं और सभी तत्व रक्त में खिंच जाते हैं। तो क्या वह सब तू चलाने गया था? अरे! अंदर का जब अपने आप चल रहा है, तो क्या बाहर का नहीं चलेगा? ऐसा क्यों मानता है कि तू कर रहा है? वह तो चलता रहेगा। रात को नींद में शरीर सहज रहता है। लेकिन ये तो असहज! दिन में तो लोग कहते हैं कि 'मैं साँस लेता हूँ, ठीक से लेता हूँ, ऊँची साँस लेता हूँ और धीरे भी लेता हूँ' तब भैया रात में कौन साँस लेता है? रात में जो श्वासोच्छवास चलते हैं, वे नोर्मल होते हैं। उससे अच्छी तरह से सारा पाचन होता है।

मनुष्य सिर्फ लट्टू हैं। मैं ज्ञानी हूँ लेकिन यह देह लट्टू है? ये जो लट्टू हैं, वे साँस से ही चल रहे हैं। साँस लेने पर डोरी लिपटती है और उससे लट्टू घूमता है। घूमते-घूमते कभी पल्टी मारता है तब हमें लगता है कि 'गया, गया' लेकिन फिर से सीधा होकर घूमने लगता है। ऐसा है यह सब!

नीम का पत्ता-पत्ता, डाल-डाल कड़वे होते हैं, उसमें उसका क्या पुरुषार्थ? वह तो बीज में जो पड़ा है, वह प्रकट होता है। वैसे ही मनुष्य अपने प्राकृत स्वभाव से व्यवहार करता है और 'मैंने किया' का सिर्फ अहंकार ही करता है, उसमें उसने क्या किया?

'मुझे ऐसा हुआ, मैं कर रहा हूँ,' ऐसा नहीं लेकिन 'मैंने यह जाना' ऐसा रहे और 'ज्ञाता-दृष्टा' रहे तो कॉज़ नहीं डलते।

जहाँ कर्ता देखे वहीं अशुद्ध उपयोग

कोई गाली दे न, तो उस वक्त वह कर्ता नहीं है, यदि उसे कर्ता देखोगे तो वह अशुभ उपयोग कहलाएगा। जगत् में आप भी कर्ता नहीं हो और अन्य कोई भी कर्ता नहीं है। इसलिए अगर अकर्ताभाव से देखोगे तो वह शुद्ध उपयोग कहलाता है। यानी हमारा एक-एक मिनट शुद्ध उपयोग रहता है, तुरंत ही, ऑन द मॉमेन्ट, वर्ना फिर अशुभ हो जाएगा। तुरंत बिगड़ जाएगा। फिर से हमें ही सुधारना पड़ेगा न? शुद्ध उपयोग मतलब 'खुद शुद्ध है, खुद किसी चीज़ का कर्ता नहीं है, खुद अक्रिय है।'

लेकिन अब दूसरों से क्या कहता है? 'आपने मेरे प्याले क्यों तोड़ दिए?' तब वह शुद्धता नहीं रही। वह खुद अपने आपको शुद्ध मानता है और शुद्ध

बरतता भी है, लेकिन, सामनेवाले से क्या कहता है? 'आपने मेरे प्याले क्यों फोड़ दिए?' यानी उसे कर्ता मानता है, उतना कच्चा है।

प्रश्नकर्ता : अर्थात् तब वह उपयोग में नहीं है?

दादाश्री : नहीं, उपयोग तो है लेकिन वह उपयोग बिगड़ गया। शुद्ध उपयोग में नहीं है, अशुभ उपयोग हुआ। अत: किसी को कर्ता नहीं मानें तभी शुद्ध उपयोग रहेगा। हम अक्रिय और सामनेवाले भी अक्रिय। जगत् में कोई भी कर्ता है ही नहीं, क्योंकि सभी शुद्धात्मा हैं। जब ऐसा अनुभव होगा, तब सर्वत्र शुद्ध उपयोग रहेगा।

अकर्तापद के भान से रहे शुद्ध उपयोग

'मैं कर रहा हूँ, तू कर रहा है और वे कर रहे हैं,' जहाँ पर ऐसा भाव नहीं है, वहाँ शुद्ध उपयोग है, संपूर्ण। यह तो अगर किसीने गाड़ी के आगे लाल झंडी दिखाई, तब 'आप लाल झंडी क्यों दिखाते हैं?' तो फिर वहाँ पर कच्चे पड़ गए। क्योंकि वह दिखा ही नहीं रहा है। कोई भी कर्ता नहीं दिखना चाहिए। तभी वह शुद्ध उपयोग कहलाएगा।

इसीलिए महावीर भगवान ने कहा था न कि, 'मैं कर रहा हूँ' 'तू कर रहा है', और 'वे रह रहे हैं' यह मेरे विज्ञान में नहीं है। किसी को, 'वह किसी भी चीज़ का कर्ता है' ऐसा मानो तो वह मेरे मोक्ष विज्ञान में नहीं है।

भगवान सृष्टि का कर्ता नहीं है। भगवान की डिक्शनरी में 'मैं करता हूँ', 'तू करता है' और 'वे करते हैं' ऐसा था ही नहीं। उनके साथ बहुत झगड़े चले थे। जब तक लोगों में बुद्धि है, तब तक बुद्धि क्या कहती है कि 'किए बगैर कैसे हो सकता है यह सब?' यही मुश्किल है न!

जब तक 'मैं करता हूँ, तू करता है, वे करते हैं' ऐसा रहेगा तब तक तरणतारण नहीं बन सकेगा कोई भी।

कर्म की थ्योरी समझने से आए हल

कर्म की थ्योरी को समझो। सब आत्मा की कर्ता थ्योरी देखते हैं। 'इन्होंने मेरा अपमान किया,' वह कर्ता है ऐसी थियरी देखी है, लेकिन मेरे कर्म के उदय यह कर रहे हैं वह थ्योरी नहीं देखी है। कई लोग कहते हैं कि 'मेरे कर्म बाधक हैं', लेकिन वह थ्योरी उन्होंने नहीं देखी है। 'कर्म क्या हैं' वह यदि समझ गया होता तो सामनेवाले पर आरोप लगाने को रहता ही नहीं कि 'इसने मुझे ऐसा क्यों किया!'

कर्म के कारण जीव छटपटाहट अनुभव कर रहे हैं। ऊपर से कहते हैं कि 'इस भाई ने मुझे ऐसा किया, वैसा किया।' इससे कर्म डबल होते जाते हैं। यदि मूल बात को समझे कि, 'यह किसलिए हुआ? घरवाले परेशान करते हैं, वह खुद का ही हिसाब है, भुगते उसी की भूल है' तो छटपटाहट कम हो जाएगी।

कर्तारूपी कड़ी से बंधे हैं हम

प्रश्नकर्ता : तो आत्मा और कर्म के बीच क्या संबंध है?

दादाश्री : दोनों के बीच कर्तारूपी कड़ी नहीं हो तो दोनों अलग हो जाएँ। आत्मा, आत्मा की जगह पर और कर्म, कर्म की जगह पर अलग हो जाएँगे। कर्ता नहीं बने तो कर्म हैं ही नहीं। कर्ता है, तो कर्म हैं। कर्ता नहीं बनो न और आप यह कार्य कर रहे हों न तो भी आपको कर्म नहीं बंधेगा। यह तो कर्तापद है आपमें कि 'मैंने किया।' इसलिए बंधा।

यदि व्यवस्थित को गलत कहोगे तो बीज डलेंगे

प्रश्नकर्ता : यह धार्युं (मनमानी) होने में तो अभी तक की जो गलतियाँ हुई हैं न, अगले जन्म बंधन के लिए। क्योंकि धार्युं करना था, धार्युं हो नहीं रहा था, लेकिन अगला जन्म बंधन ज़रूर हो जाता है उससे। ऐसा ही है न?

दादाश्री : ऐसा ही है। अगले जन्म के बीज डल जाते हैं। व्यवस्थित को गलत है ऐसा कहा कि बीज डलते हैं और यह व्यवस्थित भगवान जैसी शक्ति कहलाती है (फिर भी जड़शक्ति हैं)। उसे गलत नहीं कहते। अगर उस पर शंका भी की तो भी बीज डलेंगे।

प्रश्नकर्ता : कर्ताभाव की जो पूरी दृष्टि बन चुकी है, वही पूरा अगला जन्म बंधन करवाती है?

दादाश्री : हाँ, वही, और कौन? जो अहंकार है न, वही।

प्रश्नकर्ता : और व्यवस्थित की इस आज्ञा से वह दृष्टि छूट जाती है!

दादाश्री : छूट जाती है, और व्यवस्थित ही है। आखिर में व्यवस्थित के आधीन ही करना पड़ता है।

इस कुदरत का कैसा है? किंचित्मात्र भी किसी जीव का धार्युं नहीं होने देती। लेकिन जिसके द्वारा किसी को भी मन से, वाणी से या वर्तन से दु:ख नहीं होता, कुदरत उसे धार्युं करने की पूरी सत्ता दे देती है।

जानो, इस दुनिया को चलानेवाला कौन है?

हम किसी का दोष नहीं निकालते। लेकिन नोट करते हैं कि देखो, यह दुनिया क्या है? सब तरह से ये दुनिया मैंने देखी हुई है, बहुत प्रकार से। कुछ लोग तो व्यापार की ही चिंता करते रहते हैं! वे लोग क्यों चिंता करते हैं? मन में ऐसा लगता है कि, 'मैं ही चला रहा हूँ' इसलिए चिंता होती है। 'वह कौन चलानेवाला है' ऐसा कोई साधारण भी, किसी भी प्रकार का अवलंबन नहीं लेता। भले ही तू ज्ञान से नहीं जाने, लेकिन किसी भी प्रकार का दूसरा कोई अवलंबन तो ले, क्योंकि ऐसा तुझे कुछ अनुभव में तो आ चुका है कि तू नहीं चला रहा है। चिंता, वह सबसे बड़ा इगोइज़म (अहंकर) है।

यह छोटी सी बात आपको बता देता हूँ, यह सूक्ष्म बात आपको बता देता हूँ कि 'इस वर्ल्ड में कोई भी मनुष्य ऐसा नहीं जन्मा कि जिसकी खुद की संडास जाने की भी स्वतंत्र शक्ति हो!' तो फिर इन लोगों को इगोइज़म करने का क्या अर्थ है? यह कोई और ही शक्ति काम कर रही है। अब वह शक्ति अपनी नहीं है, वह परशक्ति है और स्वशक्ति को जानता नहीं है, इसलिए खुद भी परशक्ति के अधीन है; और सिर्फ अधीन ही नहीं, लेकिन पराधीन भी है, पूरा जीवन ही पराधीन है।

जो खुद की सत्ता में नहीं है वैसी डिज़ाइन मत बनाना। पिछले जन्म की दो-तीन छोटी बेटियाँ थीं, बेटे थे, उन सब को इतने-इतने छोटे-छोटे रखकर आए थे, तो उन सबकी कुछ चिंता करते हो? क्यों? और यों मरते समय तो बहुत चिंता होती है न, कि छोटी बेटी का क्या होगा? लेकिन यहाँ पर फिर से नया जन्म लेता है, तब पहले की कोई चिंता रहती ही नहीं न! चिट्ठी-पत्री कुछ भी नहीं! अत: यह सब परसत्ता है, उसमें हाथ ही मत डालना। इसलिए जो कुछ हो रहा है, वह 'व्यवस्थित' में हो तो भले हो और नहीं हो तब भी भले ही नहीं हो।

डिस्चार्ज है परसत्ता में, फिर वहाँ दखल क्यों?

यथार्थ दर्शन नहीं हुआ और जैसे इस दुनिया

के लोग देखते हैं, लौकिक दर्शन से कि, 'ये मेरे साले लगते हैं, ये मेरे मामा लगते हैं, ये मेरे चाचा लगते हैं' इस तरह 'मेरे' बोलने से ही राग होता है और 'यह' स्वरूपज्ञान मिलने के बाद 'मेरा' बोलना है, लेकिन वह 'ड्रामेटिक' होता है। उसमें ड्रामेटिक भाव होता है। बात छोटी और सीधी है, सिर्फ बात को समझना ही है।

ये मन, वाणी और वर्तन जो डिस्चार्ज होते रहते हैं, उन्हें सिर्फ देखते ही रहना है। डिस्चार्ज अपनी सत्ता में नहीं है। वहाँ पर आप यदि दख़ल करने जाओगे तो उससे कुछ भी फायदा नहीं होगा। 'आपको' तो 'चंदूभाई' क्या करते हैं, उसी को देखते रहना है। भगवान महावीर सिर्फ यही करते थे। जो खुद का *पुद्गल* (जो पूरण और गलन होता है) था, उसमें क्या चल रहा है, उसी को देखते थे। एक *पुद्गल* को ही देखते थे, दूसरा कुछ भी नहीं देखते थे। कैसे सयाने थे वे! जिनकी बात करते ही आनंद होता है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन संसार में ड्रामेटिक में भी खुद को करना तो पड़ेगा न?

दादाश्री : ड्रामेटिक में तो करना नहीं पड़ता, सबकुछ होता ही रहता है। और कुछ भी करने जैसा है भी नहीं, अपने आप होता ही रहता है। नींद के समय पर नींद आ जाती है, जागने के समय पर जाग जाता है, सब होता ही रहता है। इसमें 'करना पड़ेगा या करने जैसा है' ऐसा भी नहीं बोल सकते और 'नहीं करना है या करने जैसा नहीं है' ऐसा भी नहीं बोल सकते, क्योंकि कर्तापन हम लोगों में है ही नहीं। आत्मा अकर्ता है।

जो 'करे' वह परमात्मा है ही नहीं

कोई भी ऐसा भान कि 'मैं कर रहा हूँ,' वह भान कभी भी आत्मा प्राप्त नहीं करवा सकता। जब तक आप कर रहे हो, तब तक भ्रांति में हो। जब तक ऐसा भान है कि जगत् में आप कुछ भी कर रहे हो, तब तक एक अंश भी आत्मा का चखा नहीं है। लोग आकुल-व्याकुल रहते होंगे या नहीं? निरंतर आकुल-व्याकुल, क्योंकि कर्तापद है। 'मैं कर रहा हूँ और तू कर रहा है और वे लोग कर रहे हैं,' जब तक ऐसा कहते हैं तब तक भ्रांति है। और तब तक आकुलता-व्याकुलता ही है। भगवान महावीर का सिद्धांत क्या कहता है? 'मैं नहीं करता हूँ, तू नहीं करता है और वे भी नहीं करते।' कौन करता है? यह सब परसत्ता के हाथ में है। परसत्ता करती है। अब अगर हम सामनेवाले व्यक्ति से ऐसा कहें कि 'आप कर रहे हो,' तो अभी तक अपनी भ्रांति गई नहीं है।

जहाँ 'कर रहा हूँ' ऐसा है, तब तक परमात्मा नहीं है और जहाँ परमात्मा है, वहाँ पर 'करता हूँ' ऐसा नहीं है। हाँ, जब तक 'मैं करता हूँ' उतना ही नहीं, लेकिन 'तू करता है, वे करते हैं,' ये तीन शब्द है तब तक परमात्मा प्राप्त नहीं हुए है। मेरे मन में ऐसा हुआ कि, 'मैं नहीं करता हूँ' लेकिन कौन करता है ऐसा माने न तो भी भ्रांति है! वास्तव में कोई करता ही नहीं है 'कोई यह कर रहा है' ऐसा कहना वह गुनाह है। 'कोई यह नहीं कर रहा है' ऐसा कहना भी गुनाह है। और मैं करता हूँ ऐसा बोलना भी गुनाह है। उदयकर्म करवाता है और कहता है कि 'इसने ऐसा किया।' यह तो करता कोई और है और कहते हैं 'मैंने किया।' क्योंकि वह जान-बूझकर नहीं कह रहा है। उसे ऐसा भासित होता है कि 'मैं ही कर रहा हूँ।' ये और कोई नहीं दिख रहा है। दादाने ही प्याला फोड़ा। अरे, भाई मैंने तो ठेठ तक बचाने का प्रयत्न किया। मैंने कहाँ फोड़ा है? तब कहता है, 'और कोई था ही नहीं न लेकिन! आपने ही फोड़ा।' अब इस सारी बिलीफ का पता कैसे चले?

व्यवहार में जागते हुए सो जाओ

जगत् व्यवहार को चलाने के लिए हमें कुछ

भी नहीं करना होता। व्यवहार व्यवस्थित चला ही लेता है, एक्ज़ेक्टली चला ही लेता है। हम सो जाते हैं, तब भी अंदर भोजन पच जाता है, तो फिर क्या जगत् में नहीं चलेगा? इसलिए हमने क्या कहा है कि जागते हुए भी थोड़ा बहुत सोना पड़ेगा। जागते हुए सोना यानी क्या कि हम जाग रहे हों और प्याला फूट जाए तो हम पर उतना ही असर होना चाहिए जितना कि हम सो रहे हों और प्याला फूट जाए तब होता है। असर में फर्क नहीं पड़ना चाहिए। हम सो रहे हों और प्याला फूट जाए तो कितनी शांति से रहते हैं? और जागते हुए फूटे तब बीच में कौन भूत घुस गया? वह अहंकार और ममता का भूत घुस गया। उस भूत को आप पहचानो तो फिर जागते हुए भी सोया जा सकेगा। अर्थात् खुली आँखों से सोना, तो फिर कोई झंझट ही नहीं रहेगा न! और उसमें गलत क्या है?

व्यवस्थित के साथ एडजस्ट हो जाओ

वस्तुस्थिति में व्यवस्थित के साथ एडजस्ट हो जाओ। पूरा व्यवहार 'व्यवस्थित' चला ही लेता है। बिल्कुल भी अक्ल लड़ाने जैसी नहीं है। कोई भी भोजन पेट में डालकर रात को सो जाएँ, तब कौन चलाता है? अंदर पित्तरस, पाचक रस वगैरह डालना वह सब 'व्यवस्थित' ही चलाता है। अब जो अगर अंदर चला रहा है, वह बाहर नहीं चलाएगा? लेकिन बाहर के समय तो यह खुद जागता है और इसीलिए दखल किए बगैर रहता ही नहीं न! वही चीज़ अगला जन्म खड़ा करती है और इसी को कहते हैं 'अगले जन्म का संसार खड़ा किया।' और अगर सो जाए और उस घड़ी यदि पच्चीस प्याले फूट जाएँ तो भी परेशानी नहीं होगी। फिर बाईसाहब (मेमसाहब) क्या कहेंगी कि इनके जागने से पहले सभी टुकड़े बाहर फेंक दो, वर्ना अगर ये जाग जाएँगे तो तुरंत दखल करेंगे। इस तरह नींद में चला ही जाता है न? वैसा ही अब खुली आँखों से सो जाओ। फिर व्यवहार कैसा हो रहा है उसे देखो तो सही। पूरी रात सो जाता है फिर भी दाढ़ी उगती ही रहती है न? सुबह उठते हो तो आँखों से देखते हो न? उठे तो कान से तुरंत सुनाई देता है न? तो यह सब एडजस्टमेन्ट किसने किया? इसलिए अब थोड़े जागृत रहने की ज़रूरत है। व्यवहार में पूछा जाए तभी जवाब देना। यों ही दखल करना ही मत।

'व्यवस्थित' को अगर पूरी तरह समझे तो 'आग्रह' शब्द होगा ही नहीं। सामनेवाले से कहना कि आपको जैसा ठीक लगे वैसा करो। आप एडजस्ट हो जाना। 'व्यवस्थित' से बाहर कुछ भी नहीं होगा।

लगाम छोड़कर व्यवस्थित का अनुभव करो

यह लगाम छोड़ देने का प्रयोग हफ्ते में एक दिन आप करके तो देखो! रविवार हो उस दिन सुबह से ही लगाम छोड़ दो और कहना कि, 'दादा, यह लगाम आपको सौंपी।' ये पाँचों ही इन्द्रियोंरूपी घोड़ों की लगाम हमें सौंप दो और आपको तो सिर्फ देखते ही रहना है कि किस तरह चल रहा है, वह।' इस गाड़ी को खड्डे में नहीं पड़ने देगा और कुछ भी नहीं होने देगा। यह तो आपको लगाम पकड़ना नहीं आता और ढलान आए तब लगाम ढीली छोड़ देते हो और चढ़ाई आए तब लगाम खींचते रहते हो, तो घोड़े भी बेचारे हाँफ-हाँफकर थक गए हैं। और उनके मुँह लहूलुहान हो गए हैं! इसीलिए तो श्री कृष्ण भगवान ने अर्जुन से कहा कि 'तू अंदर बैठ और रथ चलाने का काम मुझे सौंप दे।' श्री कृष्ण ने लगाम पकड़ी तब कहीं जाकर अर्जुन की गाड़ी सीधी चली! हम आपको हफ्ते में एक दिन लगाम छोड़ देने को कहते हैं। शायद कभी भूलचूक हो जाए तो 'दादा, फिर से यह लगाम पकड़ ली, उसके लिए माफ़ी माँगता हूँ और अब नहीं पकडूँगा', ऐसा कहकर लगाम फिर से छोड़ देना। शुरूआत में भूल होगी, प्रेक्टिस होने

में ज़रा देर लगेगी, फिर दूसरी-तीसरी बार में करेक्टनेस आ जाएगी। लेकिन उससे आगे बढ़ने के लिए, उससे आगे का प्रोग्राम देखना हो तो 'चंदूभाई क्या बोलते हैं, उसे देखते रहना है कि यह करेक्ट है या नहीं?'

अपना ज्ञान क्या कहता है कि कोई ऐसा जन्मा ही नहीं कि व्यवस्थित में दखल कर सके। फिर भी व्यवस्थित में दखल करने के जो भाव करता है, 'व्यवस्थित' में जो कहा जाता है, वह भी 'व्यवस्थित' के अनुसार ही कहा जाता है। और उस कहे अनुसार जो होता है वह 'व्यवस्थित' ही होता है। उस व्यवस्थित के प्रति वीतराग रहो। वह 'व्यवस्थित' टेढ़ा हो तो भी वीतराग रहो और वह 'व्यवस्थित' सीधा हो तो भी वीतराग रहो। यह जो मार्ग है न वह ऐसा कहता है कि बोले बगैर या कुछ कहे बगैर क्या होता है उसे देखो।

गैरज़िम्मेदारी के ज़िम्मेदार आप खुद

न्याय अन्याय देखनेवाला तो बहुत लोगों को गालियाँ देता है। वह तो देखने जैसा है ही नहीं। न्याय-अन्याय तो एक थर्मामीटर है जगत् का कि किसका कितना बुखार उतर गया है और कितना चढ़ा! जगत् कभी भी न्यायी बननेवाला है ही नहीं और ना ही अन्यायी होनेवाला है। यही का यही मिला-जुला खिचड़ी जैसा चलता ही रहेगा।

जब से यह जगत् है, तब से ऐसे का ऐसा ही है। सत्युग में ज़रा कम बिगड़ा हुआ वातावरण होता है, अभी इसका असर ज़रा ज़्यादा है। रामचंद्रजी के समय में भी सीता का हरण करके ले जानेवाले थे, तो क्या अभी नहीं होंगे? यह तो चलता ही रहेगा। यह मशीनरी ऐसी ही है शुरू से। उसे सूझ नहीं पड़ती। उसे खुद की ज़िम्मदारियों का भान नहीं है इसीलिए गैरज़िम्मेदारीवाला मत बोलना। गैरज़िम्मेदारीवाला वर्तन मत करना? गैरज़िम्मेदारीवाला कुछ भी मत करना। सबकुछ पॉज़िटिव लेना, किसी का अच्छा करना हो तो करने जाना। वर्ना बुरे में तो पड़ना ही नहीं और बुरा सोचना भी नहीं। बुरा सुनना भी नहीं किसी का। बहुत जोखिम है। वर्ना इतना बड़ा यह जगत्, इसमें मोक्ष तो खुद के हाथ में ही पड़ा हुआ है, लेकिन मिलता नहीं है और कितने ही जन्मों से भटक रहे हैं!

शास्त्रों में कहा है कि बुरा मत बोलना, बुरा मत सोचना। हम सोचें कि ऐसे क्यों गाते रहते होंगे? ये मशीनरी ही ऐसी है कि सबकुछ टेप हो जाता है। फिर जब एविडेन्स इकट्ठे होंगे तब फज़ीता होगा।

अंदर टेप हो रहा है, इसलिए जोखिम समझो

प्रश्नकर्ता : एविडेन्स संयोग के रूप में बाहर आते हैं?

दादाश्री : हाँ, संयोग इकट्ठे होते हैं, तब बाहर आते हैं और कुछ एविडेन्स तो हमें अंदर ही अंदर परेशान करते हैं, और वह भी तब, जब भीतर संयोग इकट्ठे हो जाए। वे अंदर के संयोग कहलाते हैं। वे साइन्टिफिक सरकम स्टेन्शियल एविडेन्स हैं।

घर में पत्नी को डाँटे तो वह समझता है कि किसी ने यह तो सुना ही नहीं है न! यह ऐसे ही है न! बच्चे जब छोटे हों तब उनकी उपस्थिति में पति-पत्नी कुछ भी बोल देते हैं। वे समझते हैं कि यह छोटा बच्चा क्या समझनेवाला है? अरे, अंदर टेप हो रहा है, उसका क्या? जब वह बड़ा होगा तब बाहर निकलेगा।

इस काल में किसी को समझाने जाएँ, ऐसा नहीं है। यदि समझाना आए तो अच्छे शब्दों में समझाओ कि अगर वह टेप हो जाए, फिर भी ज़िम्मेदारी नहीं आए। इसलिए पॉज़िटिव रहना। जगत् में पॉज़िटिव ही सुख देगा और नेगेटिव बहुत दुःख देगा। अर्थात् कितना बड़ा जोखिम है!

जहाँ 'व्यवस्थित' कर्ता, वहाँ भूल किसकी?

जागृति रखनी है, ऐसा निश्चय होना चाहिए। भूल का प्रश्न नहीं है। अपने यहाँ भूल होती ही नहीं। भूलें तो, 'जिसकी' होती है, उसे फिर खुद को समझ में आता है कि यह भूल हुई, व्यवस्थित करता है, पर खुद निमित्त बना, इसलिए उसके आलोचना-प्रतिक्रमण-प्रत्याख्यान करने चाहिए कि 'ऐसा नहीं होना चाहिए।' नहीं तो फिर चलेगा ही नहीं न! चीज़ ही पूरी अलग है। कर रहा है व्यवस्थित। इसलिए अपने यहाँ किसी का दोष देखना ही नहीं चाहिए न!

इस सत्संग में किसी की भूल देखने की दृष्टि छोड़ देना। भूल होती ही नहीं किसी की। वह सब 'व्यवस्थित' करता है। इसलिए दोषवाली दृष्टि ही निकाल देनी चाहिए, नहीं तो अपना आत्मा बिगड़ जाएगा।

प्रश्नकर्ता : भूल की दृष्टि रहे, तो सीढ़ी उतर जाते हैं न?

दादाश्री : खत्म हो जाता है इंसान! सब 'व्यवस्थित' करता है। यह ज्ञान मिलने के बाद सब व्यवस्थित के अधीन होता है।

मन-वचन और काया, व्यवस्थित के आधीन

व्यवस्थित शक्ति तुझे कब समझ में आएगी? लेकिन तुझे समझ में नहीं आता उसका क्या कारण है? हम ऐसे बैठे हों न और आँख ऐसे हो जाए तो एक के बदले दो दिखने लग जाता है। अब यह दो दिख रहा हो और मैं कहूँ कि एक है, तो तेरे मानने में नहीं आएगा। तो अब मैं तुझ से कहूँ कि तू हाथ छोड़ देगा तो तेरे मानने में आएगा। हाथ छोड़ देना तेरे हाथ में है नहीं। इसलिए वह ज्ञान तुझे मन में रखना पड़ेगा कि 'हाथ छोड़ देगा तो एक ही है। यह जो दो दिख रहे हैं वह तो मेरे हाथ की वजह से है।' तो यह व्यवस्थित शक्ति ऐसी है कि तुझे समझ में नहीं आएगी। क्योंकि मन-वचन-काया और यह जो पूरी माया है, वह व्यवस्थित के ताबे में है और तू जब 'शुद्धात्मा' बन जाएगा तब वह तुझे समझ में आएगा। अभी तुझे समझना हो तो याद रखना चाहिए कि मन में विचार आया तो व्यवस्थित भेज रहा है। यह प्रेरणा जो हो रही है वह व्यवस्थित करवा रहा है। ये सभी क्रियाएँ व्यवस्थित करवा रहा है, ऐसा अगर तुझे समझ में आ जाए, ऐसा तेरे ज्ञान में रहे तो काम का है। 'व्यवस्थित' समझ में आया न? वर्ना 'मैं करता हूँ' और 'व्यवस्थित को मानना,' यह दोनों एक साथ नहीं हो सकता।

प्रश्नकर्ता : अत: खुद का कर्तापन और व्यवस्थित, दोनों साथ में नहीं रह सकते?

दादाश्री : नहीं रह सकते, क्योंकि व्यवस्थित का ही कर्तापन है। और यह सारा व्यवस्थित क्या है? साइन्टिफिक सरकमस्टेन्शियल एविडेन्स है।

तब हो सकते हैं व्यवस्थित के ज्ञान में पास

एक व्यक्ति पूछ रहा था कि, 'मुझे व्यवस्थित का नियम समझाइए।' तब मैंने उसे कहा कि गाड़ी में पाँच लोग जा रहे हों और तेरा कान पकड़कर गाड़ी में से उतार दें, तब भी तुझे ऐसा लगे कि, ओहोहो! यह वह नहीं उतार रहा है, यह तो व्यवस्थित उतार रहा है।

बैठाते वक्त उन्होंने कहा हो कि बैठो और फिर कहे कि, 'चंदूभाई, उतर जाओ।' तो चंदूभाई को तुरंत ही ऐसा ज्ञान हाज़िर हो जाना चाहिए कि यह व्यवस्थित ऐसा कह रहा है कि 'आप उतर जाओ।' किसका नाम देना है?

प्रश्नकर्ता : व्यवस्थित का नाम देना है। व्यवस्थित कहता है, उतर जाओ।

दादाश्री : व्यवस्थित उतरने को कह रहा है।

वापस थोड़ी दूर जाने पर और फिर से कोई कहेगा, 'नहीं, नहीं। रहने दो यह।' वह भाई कहेगा, 'नहीं, मैं नहीं आ पाऊँगा,' तब वे लोग फिर से चंदूभाई से कहें, 'चलो, वापस आ जाओ,' तब चंदूभाई ऐसा समझें कि 'मुझे व्यवस्थित ने बुलाया है।' और व्यवस्थित बुलाता है इसलिए व्यवस्थित अनुसार बैठ जाना चाहिए हमें। थोड़ी दूर जाने के बाद, एक फर्लांग जाने के बाद, दूसरा एक पहचानवाला सामने आ मिले तो वह फिर से कहेगा, 'ऐसा करिए न चंदूभाई, आप उतर जाइए यहाँ।' तब चंदूभाई को समझ में आना चाहिए कि मुझे यह व्यवस्थित उतार रहा है। तो वहाँ मुँह नहीं बिगाड़ना है। व्यवस्थित उतारे उसमें क्या मुँह बिगाड़ना? और फिर उतर जाना। दूर, थोड़ी दूर जाने के बाद वह व्यक्ति फिर से कहे कि 'नहीं, मेरे से नहीं आया जाएगा, रहने दो न' फिर से चंदूभाई से कहें, 'चंदूभाई, वपास आ जाओ, वपास आ जाओ' तो भी ऐसा समझना है कि व्यवस्थित ने बुलाया, नौ बार ऐसा रहे तब दादा की परीक्षा में पास हो गया, वीतरागता की परीक्षा में। नौ बार में भी मन नहीं बदलना चाहिए ज़रा सा भी। मैंने ऐसा कहा है सभी को। यह व्यवस्थित का ज्ञान ऐसा सुंदर है! व्यक्ति कोई कुछ कर ही नहीं सकता। यह व्यवस्थित ही करता है और बिना बात के मुँह थोबड़ा चढ़ाकर कहता है, 'मुझे नहीं आना है, जाओ आप' दो-चार बार निकाल दे न, तो उसकी साहजिकता टूट जाती है।

प्रश्नकर्ता : अरे, ऐसा कहता है, आपने क्या समझ रखा है? मैं क्या कुत्ता हूँ? मुझे दुत्कार रहे हो?

दादाश्री : नहीं, यानी व्यवस्थित करता है और लोग मानते हैं कि 'यह कर रहा है,' वह निमित्त है, उसे काटना नहीं चाहिए इस तरह।

प्रश्नकर्ता : लेकिन यह तो व्यवस्थित की ग़ज़ब बात आपने दे दी इस दृष्टांत से।

दादाश्री : नौ बार उतारता है तब भी 'व्यवस्थित उतारता है' वह नहीं उतर रहा है। उसके हाथ में क्या है? संडास जाने की शक्ति भी नहीं है न, वह बेचारा क्या कर पाता भला? वह क्या उतार पाता? उसे आगे मोटर टकराए और वह मर जाए।

नौ बार का कायदा मैंने कहा है। मैंने कहा, 'नौ बार तक यदि यह व्यक्ति संभाल ले तो मैं समझूँगा कि मेरे ज्ञान में पास हो गया है।' हो गया कम्पलीट (पूर्ण)। दो-चार बार तो धीरज रहता है, लेकिन बाद में मुँह पर परिवर्तन आता जाता है। नौ बार गाड़ी में बिठाए और नौ बार उतार दे, तब भी व्यवस्थित के ज्ञान को नहीं चूके, वही है अपना ज्ञान! व्यवस्थित उतारता है, व्यवस्थित ही चढ़ाता है।

प्रश्नकर्ता : ऐसा अच्छी तरह पक्का हो जाता है।

दादाश्री : ऐसा हो तभी काम का! ऐसा है यह विज्ञान। राग-द्वेष नहीं होते, निरंतर वीतरागता रहती है। व्यवस्थित के आधार पर संयम पालन हो सकता है। व्यवस्थित के ज्ञान का आधार और खुद के स्वरूप की जागृति, इस आधार पर पूरी तरह से संयम पालन किया जा सकता है। आपको समझ में आया न?

व्यवस्थित किसी का भी गुनाह नहीं दिखाता

व्यवस्थित का कर्तव्य इतना बड़ा है ऐसा हमने देखा है। इसीलिए हम गारन्टी देते हैं न! और सिर्फ व्यवस्थित ही ऐसा है कि जो किसी का भी गुनाह नहीं दिखाता। यह व्यवस्थित है, मैंने कहा है न? व्यवस्थित को तो कोई स्वार्थ नहीं होता, वह वीतरागता से देखता है।

व्यवस्थित समझ में आ जाए तो बहुत काम कर देगा। नहीं तो दूसरी बार बुलाने जाओ न तभी ऐसा मुँह इतना चढ़ा होता है न, 'अरे, घड़ीभर में

कैसे चढ़ गया ऊपर?' घड़ीभर में कैसे चढ़ गया होगा?

प्रश्नकर्ता : दादा वह, दो-तीन बार तक ठंडा रहता है लेकिन चौथी बार तो फिर वह सारा इकट्ठा करके उँडेल देता है।

दादाश्री : हाँ। यानी कि यह धीरज रखने की ज़रूरत है।

प्रश्नकर्ता : दादा, यह सृष्टता प्रत्यक्ष सजीवन मूर्ति के सिवा और कहाँ मिले?

दादाश्री : हाँ, पुस्तक में नहीं मिलती न! पुस्तक में नहीं होती। पुस्तक में हो तो सब वीतराग ही बन जाएँ न! व्यवस्थित समझ जाएँ तो वीतराग ही बन जाएँगे न सभी! शास्त्रों में नहीं होता। शास्त्रों में यह मार्ग है ही नहीं, जो मैं बताता हूँ न, वह पूरा मार्ग शास्त्रों में है ही नहीं। शास्त्रों में तो साधन बताए गए हैं कि 'ऐसा करना, वैसा करना।' यहाँ करने का मार्ग नहीं है, यह समझने का मार्ग है। 'करने' से आगे निकल गए हैं हम, भ्रांति से आगे निकल गए हैं। इसलिए बात ही अलग है न! यह बात काम आएगी न?

अगर बगीचे में जाएँ और वहाँ कोई हमें कहे कि 'जाओ', तो अगर हमें ज़रूरत हो तो विनती करना कि 'थोड़ी देर बैठूँ, तो आपको आपत्ति नहीं है न?' तब अगर वह कहे, 'नहीं, जाओ।' तो हमें समझ जाना चाहिए कि 'व्यवस्थित है' और वह कहे 'आपत्ति नहीं है' तो भी व्यवस्थित है। 'अपमान न करे' तो भी व्यवस्थित और 'अपमान करे' तो भी व्यवस्थित है। यह छोटी सी बात समझ जाए तो हल निकल आए, ऐसा है। करोड़ों सालों में भी समझ में आ सके, ऐसा नहीं है। वह हमारे ज्ञान से देखा है कि यह चलानेवाला व्यवस्थित है।

व्यवस्थित यदि पूरा समझ में आ जाए तो पूरा भगवान हो गया। जितना समझ में आया उतना भगवान हो गया।

व्यवस्थित समझ में आ जाए तो समानेवाले के लिए मन में गालियाँ नहीं देनी पड़ेंगी। 'वह बुरा है' मन में अगर ऐसा बोले तो उससे आपको कर्म बंधन होता है। 'वह बुरा नहीं है,' लेकिन उन्हें 'व्यवस्थित निर्देशन देता है कि' 'इसका अपमान कर दो।' जब यह व्यवस्थित सब को निर्देश देता है, तब ये सभी लट्टू घूमते हैं।

व्यवस्थित को समझ गए उसका मापदंड

जगत् के लोग ऐसा नहीं समझते कि 'व्यवस्थित' है लेकिन 'जो हुआ वह सही है' कहते हैं। लेकिन हमें उसे व्यवस्थित समझ लेना है। अब 'हमारे लोग' ज़्यादा से ज़्यादा चार बातों में व्यवस्थित को समझे होंगे। लेकिन फिर कहेंगे कि '(कोई) मेरा अपमान करे तो हिल जाता हूँ।' लेकिन बाद में तुरंत ही व्यवस्थित समझ में आता है तो स्थिरता रहती है।

यह तो ऐसा है न, कितनी चीज़ें बाकी रह गईं! जो व्यवस्थित समझ गया हो न, उसे तो राग-द्वेष रहते ही नहीं। पढ़ा है ऐसा तो तब कहलाएगा कि जब व्यवस्थित को एक्ज़ेक्ट (यर्थाथ) समझ ले। अपमान होते ही 'व्यवस्थित है' कहकर खोज में लग जाना है कि 'यह गोली लगी कैसे? आई कहाँ से? मारनेवाला कौन है? क्या हुआ? किसे लगी? हम कौन?' जब तक व्यवस्थित समझ में न आए तब तक यही समझता है कि 'इसने मुझे मारा है। मैंने खुद देखा है न।' अत: यदि व्यवस्थित को समझ गया होता न, तो वीतराग हो जाता।

वीतराग होकर मोक्ष में चले जाओ

इस पूरी ज़िन्दगी में कर्म के फल भोगने हैं! और यदि राग-द्वेष करे तो उसमें से नये कर्म उत्पन्न होते हैं। अगर राग-द्वेष नहीं करें तो कुछ भी नहीं।

कर्मों में कोई हर्ज नहीं है। कर्म तो, जब तक यह शरीर है तो रहेंगे ही, लेकिन राग-द्वेष करने में हर्ज है। वीतराग क्या कहते हैं कि वीतराग बनो।

इस जगत् में जो भी काम करते हो, उसमें काम की क़ीमत नहीं है, लेकिन यदि उसके पीछे राग-द्वेष हों, तभी अगले जन्म का हिसाब बंधता है। राग-द्वेष नहीं होते हों, तो जवाबदेही नहीं है।

पूरी देह, जन्म से मृत्यु तक सभी कुछ अनिवार्य है। उसमें जो राग-द्वेष होते हैं, उतना ही हिसाब बंधता है। इसलिए वीतराग क्या कहते हैं कि वीतराग होकर मोक्ष में चले जाओ।

हमें तो कोई गालियाँ दे तो हम समझते हैं कि यह अंबालाल पटेल को गालियाँ दे रहा है, *पुद्गल* को गालियाँ दे रहा है। आत्मा को तो वह जान ही नहीं सकता, पहचान ही नहीं सकता! इसलिए 'हम' उसे स्वीकार नहीं करते। 'हमें' स्पर्श ही नहीं करता। हम वीतराग रहते हैं। हमें उस पर राग-द्वेष नहीं होता। इसलिए फिर एक अवतारी या दो अवतारी होकर सभी खत्म हो जाएगा।

पूरा जगत् संयोगों और वियोगों से ही चल रहा है। इस जगत् का कर्त्ता कौन है? कोई बाप भी कर्त्ता नहीं है। सांयोगिक पुरावों से ही सबकुछ चलता रहता है, मात्र साइन्टिफिक सरकमस्टेन्शियल एविडन्स से ही चला करता है।

आपके ज्ञान लेने के बाद में हम कहते हैं न, 'आपके नए कर्म चार्ज होना बंद हो गए है।' यह तो *भोगवटा* (सुख या दु:ख का असर) है आपका। यह आपके किए हुए कर्मों का *भोगवटा* (फल) है। अब आप नया फल नहीं उपजाते, इसलिए यह *भोगवटा* पूरा करके आप अपने वतन चले जाना।

दादा का सौंपा हुआ काम करते रहो

एक-एक परमाणु तक व्यवस्थित है यह जगत्। इस जगत् की कितनी रेग्युलारिटी है! यह जगत् रेग्युलर है। यदि हम साइन्स जान लेंगे तो हमारे मन में कुछ समाधान रहेगा।

इसलिए इस सारी पीड़ा में नहीं पड़ना है। आप तो अपने काम से काम रखो न! सबकुछ कुदरत ही कर रही है। जैसा हम कहें, वैसा तो यह सब होनेवाला है नहीं। हमें ज्ञान हाज़िर कर देना है, बोलना है कि 'ऐसा करो।' दो बजे तक नहीं सोए तो हमें कहना है कि, 'भाई, जल्दी सोने से तबियत अच्छी रहेगी वगैरह-वगैरह।' इतना करके फिर हमें ओढ़कर सो जाना है, चैन से। हम कहाँ जगते रहें यह देखने के लिए की यह कब सोएँगे अब कब सोएँगे? उसका कब अंत आएगा?

इसलिए मैं कहता हूँ न भाई, इन सब का झमेला आप मत करना। आप काम करते जाओ। जैसे पराया काम हो न, उस तरह से करते जाओ? दादा का काम हो, उस तरह अपने आप करते ही जाओ। और कोई झमेला मत रखना। वह तो जब तक बुद्धि से नापने जाएगा न, तब तक कुछ मिलेगा ही नहीं। इसलिए मैंने यह 'व्यवस्थित' दिया है न कि चिंता मत करना, काम करते जाओ।

अकर्तापद में ज्ञानी का अंत:करण

प्रश्नकर्ता : आप्तसूत्र में वाक्य है। 'ज्ञानी का अंत:करण किस तरह काम करता होगा? अगर 'खुद' हट जाए तो अंत:करण से आत्मा जुदा ही है' वह समझाइए।

दादाश्री : एक तरफ यह अंत:करण संसार कार्य करता है और दूसरी तरफ आत्मा, आत्मा का कार्य करता है। 'ज्ञानी' की दखल नहीं होती।

'मैं कुछ करता हूँ' वह भाव उत्पन्न होता है,

लेकिन उस अंत:करण से 'ज्ञानी' अलग रहते हैं। यह 'ज्ञान' दिया इसलिए आपको 'रियली' कर्त्ताभाव नहीं रहा है, लेकिन 'रिलेटिवली' कर्त्ताभाव रहा है। यानी कि 'डिस्चार्ज' कर्त्ताभाव रहा है। लेकिन आपमें अभी तक अंदर थोड़ी दखल रहती है और 'ज्ञानीपुरुष' में वह दखल नहीं रहती। 'खुद' हट जाए तो 'आत्मा' 'अंत:करण' से अलग ही है। 'खुद' इस 'अंत:करण' में है ही, वह 'खुद' खिसक जाता है।

'ज्ञानी' का कैसा प्रयोग

हम 'ज्ञानियों' का प्रयोग कैसा होता है कि हरएक क्रिया को 'हम' देखते हैं। इसलिए इस वाणी को मैं 'रिकॉर्ड' कहता हूँ न! यह रिकॉर्ड बोल रही है उसे देखता रहता हूँ कि क्या रिकॉर्ड बज रही है और क्या नहीं! और जगत् तन्मयाकार हो जाता है। संपूर्ण निर्तन्मयाकार रहे उसे केवलज्ञान कहा है।

जगत् देखता है वैसे ये अज्ञानी भी देखते हैं, लेकिन उनका देखा हुआ काम में नहीं आएगा। क्योंकि उनका बेसमेन्ट (आधार) अहंकार है। 'मैं चंदूभाई हूँ' वह उसका बेसमेन्ट है। और 'अपना' बेसमेन्ट 'मैं शुद्धात्मा हूँ' है। इसलिए अपना देखा हुआ केवलज्ञान के अंश में जाता है। जितने अंश तक हमने देखा, जितने अंश तक हमने अपने आप को अलग देखा, वाणी को अलग देखा, ये चंदूभाई क्या कर रहे हैं वह देखा, उतने अंश तक केवलज्ञान उत्पन्न हुआ। हमें कोई गालियाँ दे तो वह भी हमारे ज्ञान में ही होता है। यह रिकॉर्ड क्या बोल रही है, वह मेरे ज्ञान में ही होता है। रिकॉर्ड गलत बोली हो तो वह मेरे ज्ञान में ही होता है। हमें बिल्कुल जागृति रहती है और संपूर्ण जागृति-वह केवलज्ञान है। व्यवहार में लोगों को व्यवहारिक जागृति रहती है, वह तो अहंकार के मारे रहती है। लेकिन यह तो शुद्धात्मा होने के बाद की जागृति कहलाती है। यह अंश केवलज्ञान की जागृति है और तब से ही कल्याणकारी है।

अंदर मशीनरी को ढीली नहीं छोड़ना है। हमें उस पर देखरेख रखनी है कि कहाँ-कहाँ घिस रहा है, क्या हुआ है, किसके साथ वाणी कठोर निकली। बोले, उसमें हर्ज नहीं है, हमें 'देखते' रहना है कि ओहोहो! चंदूभाई कठोरता से बोले।

प्रश्नकर्ता : लेकिन जब तक नहीं बोला जाए तब तक अच्छा है न?

दादाश्री : 'बोलना-नहीं बोलना' वह अपने हाथ में नहीं रहा अब।

अहंकार की भीड़ से भगवान दूर हुए

स्वरूप ज्ञान प्राप्त होने के बाद में अंत:करण जैसा है वैसा ही रहता है। जहाँ पर खुद नहीं है वहाँ पर 'मैं हूँ' का भ्रांति से जो आरोपण किया था, हम सिर्फ वह भ्रांति निकाल देते हैं और रियल 'मैं' को 'मैं' में स्थित कर देते हैं। फिर अंत:करणवाला जो अहंकार बचता है, वह आपका व्यवहार चला लेगा। उसे कहीं दबाना नहीं है, सिर्फ नीरस बनाना है।

लोगों की भीड़ नहीं है लेकिन अहंकार की भीड़ है। ज्ञान से अहंकार की भीड़ में भी रहा जा सकता है। नेचर नियमपूर्वक है, आत्मा नियमपूर्वक है, लेकिन बीच में जो अहम् है वह बहुत दुष्कर है। वह वही करता है जो नहीं करना चाहिए। अहम् की वजह से ही दुनिया कायम है। 'इगोइज़म' सभी शक्तियाँ खा जाता है और मार खिलाता है वो अलग। और ये चार गतियाँ भी अहम् की वजह से ही मिलती हैं। अहंकार ने ही भगवान से जुदा किया है। 'और अगर तुझे भगवान बनना है तो तू तेरा अहंकार छोड़ दे, तो फिर मैं और तू एक ही हैं। हम अलग नहीं हैं।' अगर ऐसा भान टूट जाए कि 'मैं चंदूभाई

हूँ' तो आप खुद ही भगवान के साथ एक हो जाओगे।

व्यवस्थित बुद्धि से नहीं, दर्शन से समझ में आता है

प्रश्नकर्ता : सौ प्रतिशत व्यवस्थित में आ जाएँ, तब यह कर्तापन जाएगा।

दादाश्री : व्यवस्थित सौ प्रतिशत समझ में आ जाए, व्यवस्थित का उघाड़, व्यवस्थित अगर एक्ज़ेक्ट समझ में आ जाए फिर तो केवलज्ञान हो जाए। तब तक जितना समझ में आए उतना केवलज्ञान खुलता जाता है धीरे-धीरे। व्यवस्थित बुद्धि से समझा जा सके, ऐसा नहीं है, दर्शन से समझ में आए, ऐसा है।

जिसे इस जगत् में कुछ भी नहीं आता हो और व्यवस्थित है ऐसा समझ में आ जाए, उसे ऐसा कहा जाएगा कि 'केवलज्ञान हो गया है।' यह व्यवस्थित व्यवस्थित ही है, लेकिन व्यवस्थित समझ में आना चाहिए, उसका अनुभव होना चाहिए। अगर यह व्यवस्थित समझ में आ जाए न तो फिर कुछ भी समझने जैसा रहा ही नहीं। जो व्यवस्थित को पूरी तरह से समझ जाए, वह संपूर्ण ज्ञाता-दृष्टा रह सकता है।

अंतिम व्यवस्थित केवलज्ञान ले आएगा

प्रश्नकर्ता : 'व्यवस्थित अच्छी तरह से समझ में आ जाए तो केवलज्ञान है' वह ज़रा और समझाइए।

दादाश्री : जितना व्यवस्थित के बारे में समझ आता जाता है न, उतने केवलज्ञान के अंश खुलते जाते हैं और फिर उस तरफ देखना ही नहीं रहता। जितना समझ में आ जाए उस साइड देखने का रहता ही नहीं। जिस ज्ञान में देखने को कुछ नहीं रहता, वह केवलज्ञान कहलाता है। यानी जब पूरा खत्म हो जाता है न, तब दूसरी तरफ केवलज्ञान कम्पलीट हो चुका होता है।

इस व्यवस्थित को उतने तक समझते जाना है कि अंतिम व्यवस्थित केवलज्ञान ले आएगा! मेरी व्यवस्थित की यह खोज इतनी सुंदर है, यह आश्चर्यजनक खोज है! यह व्यवस्थित तो समझ में आ गया है न, पूरा-पूरा?

प्रश्नकर्ता : पूरा का पूरा तो कैसे कह सकते हैं?

दादाश्री : जैसे-जैसे व्यवस्थित के पर्याय समझ में आते जाएँगे वैसे-वैसे जितने ज़्यादा पर्याय समझ में आते हैं उतना ज़्यादा लाभ होता है। इस व्यवस्थित का सब को समझ में आता ज़रूर है, हर एक को अपने-अपने पर्याय के अनुसार। फिर जब संपूर्ण पर्याय समझ में आ जाएँ तो उस दिन केवलज्ञान हो चुका होता है। मुझे भी चार डिग्री के पर्याय कम पड़ रहे हैं। अत: व्यवस्थित समझने जैसी चीज़ है।

जैसे रोंग मान्यता जाएगी, वैसे आज्ञा की जागृति बढ़ेगी

जितनी रोंग मान्यताएँ जाएँगी हैं उतनी जागृति बढ़ेगी और उतना ही उसे 'व्यवस्थित' समझ में आता जाएगा। जैसे-जैसे रोंग मान्यताएँ जाएँगी, वैसे-वैसे व्यवस्थित समझ में आता जाएगा और उतनी ही फिर जागृति बढ़ती जाएगी और जब संपूर्ण व्यवस्थित समझ में आ जाएगा तब पूर्णाहुति। लेकिन व्यवस्थित तुरंत समझ में नहीं आता।

अपना एक-एक शब्द समझ जाए न, एक ही शब्द यदि सही, अच्छी तरह से समझ जाए न तो अंत में केवलज्ञान तक ले जाता है! समझ में आना चाहिए! समझकर समा जाना है। जो लोग करने गए वे कभी मोक्ष में नहीं जा पाए। जो करने गया वह कर्ता बन गया और समझ गया वह समा गया।

- जय सच्चिदानंद

मुक्ति मांगे सैद्धांतिक समझ

प्रश्नकर्ता : लेकिन किताब में तो ऐसा लिखा है कि मन को आत्मा में लगा, तो उद्धार होगा।

दादाश्री : हाँ, लेकिन वह आत्मा को जानने के बाद में लगाया जा सकता है न, यों ही किस तरह से लगाया जा सकेगा? जब तक 'रियलाइज़' नहीं होगा तब तक आत्मा किसे कहोगे? आत्मा जलाने से जलाया जा सके ऐसा नहीं है, और वह पानी से भीगता नहीं है, ऐसा सब लिखा है न?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : तो ऐसी तो घड़ियाँ भी आ गई हैं, वॉटरप्रूफ और फायरप्रूफ! यानी कि मेरा कहना है कि ऐसी तो घड़ियाँ भी आती है न? आत्मा ऐसा नहीं है। आत्मा तो अनंत गुणों का धाम है और वह तो परमात्मा ही है। जब केवळी दशा में आता है, तब वह परमात्मा कहलाता है और जब तक केवळी दशा में नहीं होता और शब्दरूप में होता है, तब तक अंतरात्मा कहलाता है, जब तक शब्द का अवलंबन है, तब तक अंतरात्मा कहलाता है। फिर भी अंतरात्मा और परमात्मा में बहुत फ़र्क़ नहीं है। जो अंतरात्मा हैं, वे परमात्मा हो रहे हैं और केवळी परमात्मा हो चुके हैं, इतना ही फ़र्क़ है।

प्रश्नकर्ता : कई स्तोत्रों में, स्तुतिओं में ऐसा कहा गया है कि उन स्तुतियों का नित्यपाठ करने से संसार के सभी सुख भोगकर परमात्मा को प्राप्त किया जा सकता है। अगर ऐसा हो तो आत्मज्ञान के लिए मेहनत क्यों करें?

दादाश्री : ऐसा है न, वे तो रास्ता बताते हैं कि पुण्य बँधा हुआ होगा तो आगे बढ़ोगे, तो कभी न कभी आत्मज्ञान प्राप्त करने का रास्ता मिल जाएगा। लेकिन अगर पाप ही बँधा हुआ होगा, तो उसे यह रास्ता मिलेगा ही नहीं न? इसलिए लोगों को प्रोत्साहित करने के लिए ऐसा कहा है। बाकी यह वास्तव में, 'एक्ज़ेक्ट' कारण नहीं है।

आत्मा तो 'सेल्फ' वस्तु है। 'सेल्फ' का 'रियलाइज़ेशन' हो गया तो पूरा जगत् 'रियलाइज़' हो गया। आत्मा को जान ले तो अहंकार और ममता दोनों एक साथ चले जाते हैं। 'एट ए टाइम' चले जाते हैं।

जैसे अपना खुद का एक मकान हो, वह हमें बहुत पसंद हो। लेकिन उधार हो गया हो और हमें वह बेचना पड़े, बेचकर पैसे ले लेने के बाद में फिर दूसरे दिन अपनी ममता छूट जाती है न?

प्रश्नकर्ता : छूट जाती है।

दादाश्री : क्यों? चालीस वर्षों से मकान अपना था और बेचने के बाद दूसरे दिन जल जाए तो दुःख होगा क्या?

प्रश्नकर्ता : नहीं होगा।

दादाश्री : क्योंकि ममता सारी छूट गई। इसी तरह आत्मा जान लिया कि तुरन्त ही अहंकार-ममता सबकुछ छूट जाएगा।

(परम पूज्य दादाश्री की वाणी में से संकलित)

दादाई जगकल्याण मिशन - सत्संग हाइलाईट्स

१९-२१ अक्तूबर : दिल्ली में आयोजित सत्संग-ज्ञानविधि कार्यक्रम में ४०० मुमुक्षुओं को आत्मज्ञान प्राप्त हुआ। सेवार्थी महात्माओं के साथ पूज्य श्री का सत्संग और दर्शन का कार्यक्रम भी रखा गया। आसपास के राज्यों में से लगभग २०० मुमुक्षु महात्मा भी पधारे थे।

२३-२५ अक्तूबर : मध्यप्रदेश के जबलपुर शहर में पहली बार पूज्य श्री का सत्संग-ज्ञानविधि कार्यक्रम आयोजित किया गया। जिसमें ४१५ मुमुक्षुओं ने आत्मज्ञान प्राप्त किया। आसपास के शहर के १५० महात्मा-मुमुक्षु पधारे थे। बर्गी डेम पर पूज्य श्री के साथ सेवार्थी महात्माओं के लिए पिकनिक का आयोजन हुआ। महात्माओं ने पूज्य श्री के संग सत्संग-गरबा किया और क्रूज़ ट्रिप का भी आनंद उठाया।

२६-२७ अक्तूबर : उत्तरप्रदेश के कानपुर शहर में पहली बार पूज्य श्री का कार्यक्रम आयोजित हुआ। यहाँ पर ३४५ मुमुक्षुओंने आत्मज्ञान प्राप्त किया जिसमें नेपाल से आए लोगों ने भी आत्मज्ञान प्राप्त किया। सेवार्थियोंने पूज्य श्री के विशेष सत्संग और दर्शन का लाभ लिया।

३ नवम्बर : दिपावली के दिन अडालज त्रिमंदिर में विशेष भक्ति का कार्यक्रम रखा गया। पूज्य श्री दीपक भाई ने भी दो पद गाए। पूज्य श्री ने उस अवसर पर बताया कि 'आज भगवान महावीर का निर्वाण दिवस और गौतमस्वामी का केवलज्ञान दिवस है। उन्होंने आत्म पुरुषार्थ करके जो दशा प्राप्त की, ऐसी ही भावना हमें भी आज करनी है। जीवन में से अज्ञान रूपी अहंकार दूर हो और आत्मप्रकाश उज्वलित हो, यही दीपावली का महात्म्य है।'

४ नवम्बर : विक्रम संवत २०७० के नये साल की सुबह ८ बजे से अडालज त्रिमंदिर में भव्य प्रोग्राम का आयोजन हुआ। पूज्य श्री ने त्रिमंदिर में सभी भगवंतों को पुष्पहार पहनाकर पूजन और वंदन किए। परम पूज्य दादाश्री को अन्नकूट के सभी व्यंजन अर्पित किए और वर्ष २०१४ के कैलेन्डर का उद्घाटन किया। श्री सीमंधर स्वामी और दादा भगवान की आरती-स्तुति भी की गई। उसके बाद जायजेन्टिक हॉल में सुबह १० से १ और शाम को ४:३० से ७ बजे तक पूज्य श्री के विशेष दर्शन का कार्यक्रम रखा गया। दर्शन के दौरान महात्माओं ने विधि-प्रार्थना, कीर्तनभक्ति और भक्ति पद गाए।

७-८ नवम्बर : अडालज त्रिमंदिर में सुबह के सत्संग दौरान 'दान' बुक पर पारायण हुआ।

९-१० नवम्बर : अडालज त्रिमंदिर पर आयोजित सत्संग-ज्ञानविधि कार्यक्रम में ११५० मुमुक्षुओं ने आत्मज्ञान प्राप्त किया।

१३-१८ नवम्बर : भरूच शहर में परम पूज्य दादा भगवान का १०६वाँ जन्मजयंती महोत्सव धूमधाम और आनंद-उल्लास से मनाया गया। १३ नवम्बर की शाम को ५ बजे महोत्सव के उद्घाटन दौरान पूज्यश्री खुली जीप में ग्राउन्ड पर आए और सभी महात्माओं को दर्शन दिए। भरूच के विविध विद्यालयों के लगभग ७० बालकों ने दादा के भक्ति पदों पर सुंदर नृत्य करके सभी महात्माओं को आनंदित कर दिया। और चार दिन विविध विषयों पर प्रश्नोत्तरी सत्संग हुआ। पूज्यश्री के कर कमलों द्वारा बालविज्ञान पुस्तक और बाल भक्ति पद की नई ऑडियो सीडी जी.एन.सी-६ का विमोचन हुआ। १६ नवम्बर को परम पूज्य दादा भगवान का १०६वाँ जन्मजयंती महोत्सव बड़े धूमधाम से मनाया गया। सुबह ८ बजे त्रिमंत्र, नमस्कार विधि के बाद पूज्यश्री ने जन्मजयंती के अवसर पर संदेश दिया। और जगत् कल्याण की भावना की सामायिक करवाई। उसके बाद श्री सीमंधर स्वामी और दादाश्री का पूजन, आरती और स्तुति की गई। पूज्य श्री ने घोषणा की कि 'अगले साल परम पूज्य दादा भगवान का १०७वाँ जन्मजयंती महोत्सव कच्छ के गांधीधाम शहर में मनाया जाएगा।' इसके बाद महात्माओं ने पूज्यश्री के दर्शन किए। रात के ८ बजे तक दर्शन का प्रोग्राम जारी रहा। रात को ९ से ११ तक दादाई भक्ति पद गुंजन में महात्माओं ने आनंद उठाया। १७ नवम्बर को ज्ञानविधि में २७०० मुमुक्षुओं ने आत्मज्ञान प्राप्त किया। ५० हज़ार से अधिक स्थानिक महात्माओं ने महोत्सव स्थल पर बनाए गए थीम पार्क-चिल्ड्रन पार्क का आनंद उठाया। १८ नवम्बर को सभी सेवार्थी महात्माओं के लिए विशेष सत्संग रखा गया और सभी महात्माओं ने अपने अनुभव भी बताए।

पूज्य नीरूमाँ को देखिए टी.वी. चैनल पर...

भारत
- **'आस्था'** पर हर रोज़ रात १०-२० से १०-४० (हिन्दी में)
- **'साधना'** पर सोम से शनि - रात ९-३० से १० (हिन्दी में)
- **'डीडी-पटना'** पर सोम से शुक्र शाम ६-३० से ७ (हिन्दी में) **(नया कार्यक्रम)**
- **'डीडी-गिरनार'** पर हर रोज़ सुबह ७ से ७-३० ज्ञानवाणी (गुजराती में)
- **'अरिहंत'** पर हर रोज़ सुबह १० से १०-३०, दोपहर ३-३० से ४ (गुजराती में)

USA - **'TV Asia'** पर हर रोज, सुबह ७-३० से ८ EST (गुजराती में)

UK - **'विनस'** (डीश टीवी चेनल 805-युके) पर हर रोज़ सुबह ८ से ८-३० (हिन्दी में)

पूज्य दीपकभाई को देखिए टी.वी. चैनल पर...

भारत
- **'साधना'** पर हर रोज़ - **सुबह ७-४० से ८-१० और शाम ७-१० से ७-४०** (हिन्दी में)
- **'दूरदर्शन-नेशनल'** पर हर रविवार सुबह ६-३० से ७ (हिन्दी में)
- **'डीडी-गिरनार'** और गुजरात में **'दूरदर्शन'** पर हर रोज़ दोपहर ३-३० से ४ (गुजराती में)
- **'डीडी-गिरनार'** पर हर रोज़ रात ९ से ९-३० (गुजराती में)
- **'डीडी-सह्याद्रि'** पर हर रोज़ सुबह ७ से ७-३० (मराठी में) **(समय में परिवर्तन)**

USA - **'TV Asia'** पर हर रोज, सुबह १० से १०-३० EST (गुजराती में)

USA-UK - **'आस्था'** (डीश टीवी चेनल 849-युके, 719-युएसए) पर हर रोज़ रात ९-३० से १० (गुजराती में)

'दादावाणी' के सभी सदस्यों के लिए सूचना

हिन्दी और अंग्रेजी भाषाओं में दादावाणी पत्रिका हर महिने 15वी तारीख को पोस्ट की जाती है। जिन महात्माओं को 'दादावाणी' पत्रिका विलंब से या तो अनियमित रूप से मिलती है, वे पूर्व प्राप्त पत्रिका के कवर पर अपना नाम, पता, पीनकोड आदि जाँच कर लें। यदि उसमें कोई भूल हो तो आपका ग्राहक नं, पूरा नाम-पता, पीनकोड के साथ लिखकर मोबाईल नं. 8155007500 पर SMS करें। आप अडालज त्रिमंदिर के पते पर पत्र से या dadavani@dadabhagwan.org इ-मेइल आइडी पर इ-मेइल से भी सूचित कर सकते हैं। जिससे आपकी यहाँ दर्ज की गई जानकारी में सुधार किया जा सके। यदि आपको दादावाणी का अंक न मिले तो उपर दिए गए कोई भी माध्यम से हमें सूचित करें। यदि अंक स्टोक में होगा तो आपको फिर से भेजा जाएगा।

दादावाणी' के वार्षिक सदस्यों के लिए सूचना

आपको आपकी दादावाणी पत्रिका की सदस्यता समाप्त हो रही है उसका पता कैसे चलेगा? यदि आपको मिली इस महीने की दादावाणी पत्रिका के कवर पर लगे हुए लेबल पर ग्राहक नं. के बाद # हो तो यह आपकी अन्तिम दादावाणी पत्रिका है। उदा. DHIA12345 #. दादावाणी पत्रिका रिन्यु कराने के लिए पेज नं. ३ पर दर्शाये गए मूल्य अनुसार मनी आर्डर या डिमान्ड ड्राफ्ट (पेयेबल अहमदाबाद) त्रिमंदिर अडालज के पते पर भेजें। साथ ही अपना नाम, पूरा पता (पिनकोड के साथ), फोन-मोबाइल नंबर, इ-मेल आदि आवश्यक जानकारी दें।

मुख्य सेन्टरों के संपर्क : अडालज त्रिमंदिरः (079) 39830100, **अहमदाबादः** (079) 27540408, **वडोदरा : (दादा मंदिर)** 9924343335, **राजकोट त्रिमंदिरः** 9274111393, **भूज त्रिमंदिरः** (02832) 290123, **गोधरा त्रिमंदिरः** (02672) 262300, **मुंबईः** 9323528901, **दिल्लीः** 9310022350, **बैंगलूरः** 9590979099, **कोलकताः** 033-32933885, **यु.के.:** +44 330-111-DADA (3232), **यु.एस.ए.-केनेडाः** +1 877-505-DADA (3232), **ऑस्ट्रेलियाः** +61 421127947, **केन्याः** +254 722722063

अडालज त्रिमंदिर में सत्संग पारायण - दि. २१-२८ दिसम्बर तथा मूर्ति प्राणप्रतिष्ठा दि. २९ दिसम्बर

पारायण के दौरान आप्तवाणी-७ और ८ (गुजराती) किताबों का वाचन और उन विषयों पर सत्संग होगा। दि. **२१ से २८ दिसम्बर** - सुबह ९-३० से १२, शाम ४-३० से ७ तथा रात ८-३० से ९-३० सामायिक. दि. **२९ दिसम्बर** (रवि) सुबह ९-३० से १२ - **श्री सीमंधर स्वामी की छोटी प्रतिमाओं की प्राणप्रतिष्ठा** हिन्दी भाषी महात्माओं के लिए रेडियो सेट के द्वारा हिन्दी में भाषांतर की सुविधा उपलब्ध होगी। महात्मा अपना खुद का रेडियो या FM सुविधायुक्त मोबाइल (हेडफोन के साथ) लेकर आए।

आत्मज्ञानी पूज्य दीपकभाई के सांनिध्य में आगामी सत्संग कार्यक्रम

अडालज त्रिमंदिर

४ जनवरी (शनि), शाम ४-३० से ७ - **सत्संग** तथा **५ जनवरी** (रवि), दोपहर ३-३० से ७ - **ज्ञानविधि**

अहमदाबाद

२४-२५ जनवरी (शुक्र-शनि) -शाम ६ -३० से ९ **सत्संग** तथा **२६ जनवरी** (रवि), शाम ५ से ९-३० - **ज्ञानविधि**
स्थल की जानकारी के लिए संपर्क : 9428330377

राजकोट

७-८ फरवरी (शुक्र-शनि) -शाम ७ -३० से १० **सत्संग** तथा **९ फरवरी** (रवि), शाम ६-३० से १० - **ज्ञानविधि**
स्थल : श्री रणछोडदासजी बापु आश्रम ग्राउन्ड, अलका सोसाइटी मेइन रोड, कुवाडवा रोड. **संपर्क :** 9879137971

मोरबी

१२ फरवरी (बुध) -शाम ८ -३० से ११ **सत्संग** तथा **१३ फरवरी** (गुरु), शाम ७-३० से ११ - **ज्ञानविधि**
स्थल : समय गेट के पास, विनायक होल के सामने, शनाला रोड, मोरबी. **संपर्क :** 9909172755

भुज

१५ फरवरी (शनि) -शाम ६-३० से ९ **सत्संग** तथा **१६ फरवरी** (रवि), शाम ५-३० से ९ - **ज्ञानविधि**
स्थल : ज्युबिली ग्राउन्ड, भुज. **संपर्क :** 7567561556

चंदीगढ़

८ मार्च (शनि) -शाम ६ से ८-३० **सत्संग** तथा **९ मार्च** (रवि), शाम ५ से ८-३० - **ज्ञानविधि**
स्थल : टागोर थीयेटर, सेक्टर-18, सरकारी मोडेल हाइ स्कूल के सामने, चंदीगढ़. **संपर्क:** 8427413624

सुरेन्द्रनगर

१४ मार्च (शुक्र) - शाम ४-३० से ७ - **सत्संग** तथा **१५ मार्च** (शनि), दोपहर ३-३० से ७ - **ज्ञानविधि**
स्थल : त्रिमंदिर, सुरेन्द्रनगर-राजकोट हाई-वे, लोक विद्यालय के पास, मुली रोड. **संपर्क :** 9879741582

सुरेन्द्रनगर त्रिमंदिर का प्राणप्रतिष्ठा महोत्सव

दि. १६ मार्च २०१४ (रविवार)

प्राणप्रतिष्ठा : सुबह ९-३० से १, **प्रक्षाल-पूजन-दर्शन-आरती :** शाम ४ से ७, **भक्ति :** रात ९ से १०
स्थल : त्रिमंदिर, सुरेन्द्रनगर-राजकोट हाई-वे, लोक विद्यालय के पास, मुली रोड. **संपर्क :** 9879741582
विशेष सूचना : प्राणप्रतिष्ठा कार्यक्रम केवल एक दिन का है, इसलिए रात्रि आवास की सुविधा उपलब्ध नहीं हो पाएगी।

दिसम्बर 2013
वर्ष - ९, अंक - २
अखंड क्रमांक - ९८

दादावाणी

Date Of Publication On 15th Of Every Month
RNI No. GUJHIN/2005/17258
Reg. No. GAMC - 1500/2012-2014
Valid up to 31-12-2014
LPWP Licence No. CPMG/GJ/15/2012
Valid up to 30-6-2014
Posted at AHD. P.S.O. Sorting Office Set - 1
on 15th of each month.

विज्ञान समझे तो आए हल

'खुद कर्ता है' ऐसा मानने से (हमारा)जगत खड़ा है और 'कर्ता कौन है' जानने से (ऊससे) छूट जाएगा। भगवान कर्ता नहीं है और लोग भी कर्ता नहीं है। सायन्टिफिक सरकमस्टेन्शियल एविडन्स, सांयोगिक प्रमाण इकट्ठा होकर कार्य होता है, वर्ना कार्य नहीं होता। वे संजोग इकट्ठा करनेवाली एक शक्ति है, वह 'व्यवस्थित शक्ति' है। वह सारे संयोग इकट्ठा कर देती है। वह भगवान की शक्ति नहीं है । उस 'व्यवस्थित' पर किसी का भी काबू नहीं है। 'व्यवस्थित शक्ति' यानी दूसरें संजोग की जरूरत है, वे संजोग सारे इकट्ठे होकर यह सब कार्य हो रहा है। मतलब यह विज्ञान है, इसलिए यह सब खुल्ला किया है। 'व्यवस्थित' को 'व्यवस्थित' मानो तो हल आ जाएगा।

- दादाश्री

Printed and Published by Dimple Mehta on behalf of Mahavideh Foundation-Owner. Printed at Amba Offset, Basement, Parshvanath Chambers, Usmanpura, Ahmedabad-380014.